सत्साहित्य-प्रकाशन

ग्राम-समाज का नया रूप

सामुदायिक विकास
और
पंचायती राज

जवाहरलाल नेहरू

●

१९६५

सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय
मंत्री, सस्ता साहित्य मंडल,
नई दिल्ली

पहली बार : १९६५
मूल्य
अढ़ाई रुपये

मुद्रक
शोभा प्रिन्टर्स
नई दिल्ली-५

प्रकाशकीय

भारत के स्वतंत्र होने के बाद से पं जवाहरलाल नेहरू का बराबर प्रयत्न रहा कि देश के नव-निर्माण में शहर ही नहीं, बल्कि गांव भी हिस्सा लें। इसके लिए उनकी प्रेरणा से बहुत-सी योजनाएं तैयार हुईं और उनका जाल सारे देश में फैलाने के लिए कोशिशें की गईं। मानना होगा कि इन योजनाओं के द्वारा ऐसे साधन और सुविधाएं जुटाई गईं, जिनसे ग्रामवासी अपनी पूरी शक्ति से काम कर सकें।

इस पुस्तक में नेहरूजी के उन प्रेरणादायक भाषणों तथा संदेशों को संकलित किया गया है, जो उन्होंने समय-समय पर सामुदायिक विकास तथा पंचायती राज की मूल भावना और महत्व पर दिये थे।

भारत गांवों में बसता है। इसमें कोई संदेह नहीं कि जबतक गांवों को ऊपर नहीं उठाया जायगा तबतक देश की उन्नति नहीं हो सकती।

सहकारिता से संबंधित नेहरूजी के भाषण 'सहकारिता' नामक पुस्तक में दिये गए हैं।

ये दोनों तथा इन विषयों की 'मण्डल' द्वारा प्रकाशित अन्य पुस्तकें वास्तव में बड़ी उपयोगी हैं। हमें विश्वास है कि इनसे सभी क्षेत्रों के पाठक लाभ उठावेंगे।

—मंत्री

"मेरा खयाल है कि दुनिया के किसी भी मुल्क में पिछले कुछ सालों में हिन्दुस्तान की सामुदायिक परियोजनाओं से बढ़कर महत्वपूर्ण और क्रान्तिकारी काम दूसरा नहीं हुआ। इससे देहाती हिन्दुस्तान की शक्ल ही बदली जा रही है। ...हिन्दुस्तान से बाहर इन्होंने सनसनी फैला दी है। और यह न भूलिये कि ये पूरी तरह हिन्दुस्तान की उपज हैं।"

—जवाहरलाल नेहरू

भूमिका

पांच बरस पहले श्री जवाहरलाल नेहरू ने प्रधान मंत्री और सामुदायिक विकास की केन्द्रीय कमेटी के अध्यक्ष की हैसियत से सामुदायिक विकास-कार्यक्रम राष्ट्र को भेंट किया था। तबसे सामुदायिक विकास जिस रूप में हिन्दुस्तान की धरती में विकसित हुआ है, वह व्यवहार में 'जीओ और जीने दो' के पुराने विचार की पुनरावृत्ति है। यह कथन उतना ही पुराना है जितना खुद आदमी। शुरू-शुरू में हमने जो अन्दाज़ लगाये थे, यह कार्यक्रम उनसे कहीं अधिक गहरा और व्यापक हो गया है। यह न सिर्फ हिन्दुस्तान के लिए महत्वपूर्ण हो गया है, बल्कि उन सब देशों के लिए भी, जो आज गरीबी, अज्ञान और रोग के अंधकार में भटक रहे हैं और रोशनी की तलाश में जूझ रहे हैं। इस कार्यक्रम के लिए जो व्यापक दिलचस्पी पैदा हो गई है, उसके कारण इसमें लगे हुए कार्यकर्ताओं पर आगे के काम के बारे में और भी ज्यादा जिम्मेदारी आ गई है।

हिन्दुस्तान में सामुदायिक विकास का विचार इस देश के लोगों की प्रतिभा के अनुसार विकसित हो रहा है। उसे इसी तरह के विदेशी अनुभवों से भी मदद मिल रही है, जिन्हें हम पचा सकते हैं। आन्दोलन की मुख्य चिनगारी प्रधान मंत्री ने उस समय सुलगाई जब उन्होंने मई १९५२ में विकास आयुक्तों की पहली कान्फ्रेंस का उद्घाटन किया था। उस कान्फ्रेंस में जो लोग उपस्थित थे और जिन्होंने दूसरे मौकों पर आमने-सामने बैठकर उनके भाषण सुने हैं, उन्होंने अपनी पात्रता के अनुसार प्रेरणा ग्रहण की है। इस कार्यक्रम को अबतक उतनी सफलता मिल गई है, जितनी से इसकी मूल प्रेरणा को, बिना किसी गम्भीर कमी के, कायम रखा जा सका है। जब इस कार्यक्रम का विस्तार हो रहा है, तो यह गम्भीरता से सोचने का मौका आ गया है कि किस तरह उन

लोगों को प्रेरित किया जाय, जो दूर-दूर और छोटे-छोटे स्थानों में इस मशाल को लंबे-चौड़े क्षेत्र में ले जाने का काम कर रहे हैं। हम छोटे लोगों में वह शक्ति नहीं है कि हम उस चिनगारी की रोशनी को मंद न पड़ने देते हुए दूर-दूर तक पहुंचा सकते।

प्रधान मंत्री के संदेश बिखरे हुए हैं और उन्हें संग्रहीत और संकलित करने का विचार स्वागत-योग्य प्रयास है। यह संकलन यथा-संभव प्रधान मंत्री के शब्दों में किया गया है, ताकि उनका संदेश उन हजारों कार्यकर्ताओं और लाखों देशवासियों तक पहुंच सके, जिन्हें प्रधान मंत्री की उस 'साहसिक भावना' में भागीदार बनने का मौका नहीं मिला है, जिसके बल पर हम 'भारत लिमिटेड' के संयुक्त उद्योग में हिस्सेदार बन सकते हैं। यह प्रकाश उस समय तक फैलता जाय जबतक कि बाहर और भीतर का कोना-कोना उससे आलोकित न हो उठे।

सामुदायिक विकास-मंत्रालय
नई दिल्ली

—एस० के० डे

विषय-सूची

सामुदायिक विकास
और
पंचायती राज

: १ :

हमारा अन्तिम लक्ष्य

सबसे अहम बात यह है कि आप और मैं यानी हम सब सामुदायिक योजना के सवाल पर किस नज़रिये से गौर करते हैं। क्या यह हमारी बहुत-सी योजनाओं, बेशक अच्छी योजनाओं में-से एक है, जिनके लिए हम दिन-भर काम करते हैं और बाकी किस्मत भरोसे छोड़ देते हैं या यह उससे कुछ ज्यादा है? क्या यह कोई ऐसी चीज़ है जिसका आप प्रशासक, विकास-आयुक्त, केन्द्रीय समिति अथवा योजना आयोग वगैरा की हैसियत से ऊपर से संचालन करेंगे, या यह कोई ऐसी चीज़ है, जिसके जरिये आप हमारे लोगों में काम करने के लिए नीचे से ताक़तों को उभार सकेंगे? जो ताकतें बिना तयशुदा मसविदों और बिना ठीक-ठीक तालमेल के उभरती हैं, उनके कभी अच्छे नतीजे आते हैं, तो कभी बुरे। ऊपर से अच्छी रहनुमाई हो और अच्छा संगठन हो, यह जाहिरा तौर पर जरूरी और अनिवार्य है, लेकिन अगर नीचे

से ताकतें नहीं उभरती हैं तो अच्छी रहनुमाई और अच्छा संगठन बिल्कुल बेकार साबित हो सकते हैं ।

कभी-कभी मुझे शक होने लगता है और थोड़ा डर भी लगने लगता है उस ऊपर की रहनुमाई से, जो हम हमेशा देते रहते हैं और इसमें मैं खुद शामिल हूं । हममें मुल्क को, लोगों को और हर किसीको अच्छी सलाह देते रहने की आदत पड़ गई है । मगर मेरा खुद का यह तजरबा है कि बहुत लोग ज़्यादा सलाह पसन्द नहीं करते । ये सलाहें चिढ़ पैदा कर देती हैं । हम दूसरों का भला करने के मक़सद से सलाहें देते हैं, किन्तु उनसे किसी भी तरह यह मक़सद पूरा नहीं होता । दूसरे शब्दों में बुनियाद रखे विना, नीचे की सीढ़ियों के साथ गहरा नाता कायम किये विना, ऊपर से ज्यादा रहनुमाई देते रहने से तो हम बड़े नतीजे मुश्किल से ही हासिल कर सकेंगे । बेशक, कुछ-न-कुछ नतीजा तो हम हासिल करेंगे । इस तरह सवाल यह है कि इन दो चीजों को किस तरह मिलाया जाय ?

जाहिर है कि हमको योजना बनानी होगी, उसको चलाना होगा, उसका संगठन करना होगा और उसमें ताल-मेल बैठाना होगा, मगर इससे भी ज्यादा जरूरी हमें ऐसे हालात पैदा करने हैं, जिनमें आपो-आप नीचे से विकास मुमकिन हो सके । मैं ताज्जुब करता हूं कि क्या यह सामुदायिक विकास-योजना ऐसी योजना है, जो चोटी के और बाकी के दूसरे लोगों के बीच एकता कायम कर सकेगी ? चोटी से मेरा यह मतलब नहीं है कि कुछ लोग बड़े हैं । मेरा मतलब मार्ग-दर्शकों और संगठन-कर्त्ताओं से है और बाकी के दूसरों से मेरा मतलब उन

करोड़ों लोगों से है, जो इस काम में हिस्सा लेंगे। दरअसल अखीर में चोटियां और श्रेणियां कुछ नहीं होनी चाहिए। फिर भी मैं महसूस करता हूं कि संगठन-सम्बन्धी नेतृत्व एक गेंद की तरह ऊपर से नीचे को नहीं फेंका जाना चाहिए। दूसरे शब्दों में सामुदायिक परियोजनाओं के लिए भी जहांतक मुमकिन हो, पहल लोगों की ओर से आनी चाहिए, जिनपर कि उनका सबसे ज्यादा असर पड़नेवाला है।

अक्सर हम अपने कमरों में बैठ जाते हैं और जिसमें लोगों का भला समझते हैं, उसके मुताबिक हर बात का फैसला कर डालते हैं। मेरे खयाल से हमें लोगों को इन बातों के बारे में खुद सोचने का मौका देना चाहिए और वे इस तरह हमारे विचारों पर असर डालेंगे, जिस तरह कि हम उनके विचारों पर डालते हैं। इस तरह कहीं ज्यादा जानदार और अच्छे ताल-मेलवाली योजना बनती है, ऐसी योजना जिसमें गहरी साझेदारी की भावना होती है—यह साझेदारी की भावना काम को करने में नहीं, बल्कि काम खड़ा करने और उसके बारे में सोच-विचार करने में होती है। हममें या आपमें से जो लोग ज्यादा समझे-बूझे हैं, जिन्होंने इस मसले के बारे में ज्यादा गौर किया है, और कुछ हद तक इस तरह के काम के लिए ज्यादा मौजूं समझे जा सकते हैं, वे आपके या मेरे मुकाबले परियोजनाओं के बारे में सोचने और रहनुमाई करने के लिए ज्यादा हकदार हैं। साथ ही, यह भी उतना ही सच है कि जिन लोगों के लिए आप काम करते हैं और जिन्हें अखीर में खुद अपने लिए काम करना है, भले ही, वे खास जानकार न हों, खुद जबतक उनके मन में उभार पैदा नहीं

होगा, सोचने और काम करने की रचनात्मक भावना उनमें नहीं आयगी, तबतक वे उस शक्ल में काम नहीं करेंगे, जिसमें कि हम उन सबको काम करते हुए देखना चाहते हैं।

मेरा पक्का खयाल है कि सामुदायिक परियोजनाएं बहुत ज्यादा अहमियत रखती हैं, केवल इसलिए नहीं कि ऐसी हर परियोजना से जो कुछ माली तौर पर मिलता है, उसका हिसाब आप कागज पर लिख सकते हैं, जो मैं उम्मीद करता हूं काफ़ी लम्बा-चौड़ा होगा, यानी यह पता चलेगा कि परियोजना के जरिये कितना ज़्यादा अनाज पैदा किया गया, मकान बने, स्कूल और दवाख़ाने खुले, अच्छी सड़कें, तालाब, कुएं आदि बनाये गए। आप ऐसी फ़ेहरिस्त बना सकते हैं और उसको देखकर खुशी होती है, मगर मेरा मन उससे भी आगे हर मर्द, औरत और बच्चे की ओर जाता है। मकान अच्छा हो सकता है, लेकिन अख़ीर में अहमियत उस मकान को बनानेवाले की है, मकान की या उस मकान में रहनेवाले की नहीं। इसलिए मेरा मन उस बनानेवाले के बारे में सोचता है, हम भारत के तमाम लोगों को निर्माता बनाना चाहते हैं। ये सामुदायिक परियोजनाएं बुनियादी अहमियत की मालूम होती हैं, सिर्फ़ इसीलिए नहीं कि इनसे माली तरक्की होगी, बल्कि उससे भी कहीं ज़्यादा इसलिए कि वे समाज और आदमी को बनाती हैं और आदमी को खुद अपने गांव का और बड़े मानी में हिन्दुस्तान का बनानेवाला बनाती हैं।

अब, आप किस तरह आगे बढ़ेंगे ? कुदरतन गोल-मोल चर्चाओं और बहस-मुबाहसे के जरिये नहीं। हम बिना काफी

गहरी चर्चा के ये योजनाएं नहीं बना सकते और मुझे यह कहते हुए खुशी होती है कि पिछले दो-तीन महीनों में काफ़ी ऐसी चर्चाएं हुई हैं और उनका कुछ नतीजा भी निकला है। मगर मुझे कुछ डर भी लगता है जब मैं यह योजना-निर्माण और संगठन देखता हूं कि कहीं हम इसे अपने काम का खास हिस्सा ही न समझने लगें। हम यह सोचने लग सकते हैं, जैसाकि हममें से बहुतों की आदत है कि बड़ी-बड़ी इमारतों और दफ्तरों में बैठनेवाले हम ही लोग काम करते हैं। हम इस तरह की कोई बात नहीं कर रहे हैं। हम तो केवल बताते हैं कि काम को किस तरह करना चाहिए। काम तो दूसरे लोगों को ही करना होगा। किसी तरह से भी हो, आज काम करनेवाले लोगों में आत्म-विश्वास नहीं है। इन कामों के लिए लोगों में पहल और उभार कैसे पैदा किया जाय ? उनमें वह साझेदारी की भावना, वह उद्देश्यमूलक भावना और वह काम करने का उत्साह कैसे पैदा किया जाय ?

जब मैं अपने मन में पैठता हूं और पुरानी यादों को ताज़ा करने की कोशिश करता हूं तो मुझे याद आता है कि हमने अपने निजी और राष्ट्रीय जीवन में कभी-कभी इसी तरह सोचा, महसूस किया और काम किया है। इस तरह की भावना ही आदमी के व्यक्तित्व को बढ़ाती है। हालांकि यह हमारे देश में हुआ है, मगर मैं नहीं जानता कि हमारे जिंदा रहते-रहते ऐसा फिर होगा। हम अपने पुराने पैमाने पर नहीं पहुंच पा सकेंगे, क्योंकि हालत जुदा है। जो हो, मैं उस पीढ़ी का हूं, जो कमो-बेश गुजरे जमाने से ताल्लुक रखती है और इसीलिए मैं दूसरों के

लिए, नौजवान पीढ़ी के लिए, नहीं कह सकता, जिसे हमारी ही तरह महसूस करना चाहिए। हम वैसा महसूस करें या न करें, मुझे यह बिल्कुल साफ दिखाई देता है कि यदि हिन्दुस्तान को फिर से बनाने का बड़ा काम करना है तो हमारे लिए इस बारे में किताबों और आंकड़ों, निबन्धों और निर्देशों, योजनाओं और संगठनों के अलावा और भी वहुत-कुछ ज़रूरी है। काम करने के लिए गहरे जोश और बड़ी कोशिश के लिए मुल्क को उकसानेवाली भावना की ज़रूरत होगी। हां, तो सामुदायिक परियोजनाओं को उस नज़रिये से देखा जा सकता है? शायद मैं वहुत ऊंची बात आपके सामने रख रहा हूं और बहुत ऊंची बात पेश करना ख़तरनाक होता है, कारण, उस हालत में आपपर उल्टा ही असर होगा।

मेरे खयाल में शायद ही ऐसा कोई मुल्क होगा—मेरा मतलब दूसरे मुल्कों को बे-इज़्ज़त करने का नहीं है—जिसके सामने हिन्दुस्तान के जैसे ऊंचे आदर्श हों। और मैं यह भी कह दूं कि शायद ही कोई ऐसा मुल्क होगा, जिसमें आदर्शों और व्यवहार के वीच इतनी चौड़ी खाई हो, जितनी हिन्दुस्तान में है। इसलिए बड़ी-बड़ी बातें करना और अपने लक्ष्य के आस-पास कहीं भी न पहुंच पाना, एक खतरनाक चीज़ है। फिर भी कभी-कभी आदमी को तारों की ओर देखना पड़ता है, भले ही वह उन तक न पहुंच पावे। अपने आदर्शों को सिर्फ़ इसलिए कि आपके खयाल से वे वहुत ऊंचे हैं, नीचा करना ठीक नहीं है, भले ही आप उन आदर्शों के बहुत पास न पहुंच सकें। हम सामुदायिक परियोजनाओं को अपने दफ्तरों के घेरे से कितना दूर ले जा

सकते हैं और उन्हें ऐसे जानदार स्त्री-पुरुषों की योजनाएं बना सकते हैं, जो कुछ अहम काम कर डालने के जोश से भरे और प्रेरित हों। यही सवाल है। हम सही और लाजमी तौर पर रुपये-पैसे और साधनों का हिसाब लगाते हैं। आदमी को यह करना पड़ता है, वह गैर-जिम्मेदारी से काम नहीं कर सकता। मगर मैं यह कहूंगा कि ये सब कम जरूरी चीजें हैं। खास अहमियत इनसे ताल्लुक रखनेवाले आदमी की है—उस आदमी की, जिसे काम करना है, जिसे महसूस करना है और अपने सोचे हुए को अमली जामा पहनाना है। क्या आप उस तरह का इन्सान बनाने की कोशिश करेंगे? बेशक, इन्सान मौजूद हैं। आपको उसके दिल और दिमाग़ को छूना-भर है। आप यह काम सलाह देकर नहीं कर सकते। मेरी बात मान लीजिये, बहुत ज्यादा सलाह मत दीजिये, काम को खुद कीजिये। दूसरों को आप यही सलाह दे सकते हैं। आप ऐसा करें और दूसरे आपके पीछे चलें। आप ऐसा क्यों सोचते हैं कि आप विकास-आयुक्त हैं, इसलिए बड़े दफ्तर में बैठना और हुक्म जारी करना आपका काम है। मैं आदर के साथ यह कहने की इजाज़त चाहता हूं कि अगर आप ऐसा सोचते हैं तो आप बेकार हैं। अच्छा होगा कि आप और कहीं चले जायं और कोई दूसरा काम करें। इस बारे में हमें साफ होना चाहिए।

कोई विकास-आयुक्त हो या प्रशासक, उसे हमेशा अपने दफ्तर में बैठे रहना और आदेश जारी नहीं करते रहना चाहिए। उसे कुदाली हाथ में लेनी चाहिए और खुदाई करनी चाहिए या और कुछ करना चाहिए। इस योजना से सम्बन्धित कोई भी

आदमी, जो दफ्तरों में बैठा रहता है, मेरे खयाल से नालायक है। अगर आप खुद काम करेंगे तो दूसरों से भी करा सकेंगे। रहनुमाई करने और दूसरों से काम करने की अपील करने का यही एक तरीका है। हम लोग आलसी बनते जा रहे हैं, खासकर अपने हाथ-पांव नहीं हिलाना चाहते और अक्सर दिमागी तौर पर भी सुस्त बन रहे हैं। हालांकि हमारे मौजूदा काम से इस बात का कोई ताल्लुक नहीं है, फिर भी मुझे अफसोस के साथ कहना पड़ता है कि हमारे विश्वविद्यालयों का माप-दण्ड गिर रहा है और अगर इसे रोका न गया तो मैं नहीं जानता कि आगे चलकर हम कोई बड़ा काम कैसे कर पायंगे, किन्तु यह दूसरा ही मसला है।

आप जहां भी हों, मैं उम्मीद करता हूं कि आप हर रोज सुबह अपने काम की शुरुआत, यदि मुमकिन हो तो, सामुदायिक परियोजनाओं को पूरा करने के सिलसिले में थोड़े शारीरिक श्रम से करेंगे। आपको इस कोशिश में साझेदारी की भावना को बढ़ाना चाहिए।

मैं नहीं जानता कि हमारे विकास-आयुक्तों या प्रशासकों ने अबतक योजनाओं पर रोशनी डालनेवाले हैण्डबिल और छोटी-छोटी किताबें निकालने के सिलसिले में क्या किया है। मैंने यहां एक छोटी किताब देखी है, वह अंग्रेजी में है। वह काम-काजी और अच्छी है। मैं उम्मीद करता हूं कि ऐसी किताबें हिन्दुस्तान की सभी भाषाओं में निकाली जायंगी। मगर और भी बहुत-कुछ करना होगा। मैं चाहता हूं कि यह विषय काम-काजी ढंग से नहीं, बल्कि इन्सानी तरीके से समझाया जाय, ताकि किसी तरह लोगों

के दिमाग में समा जाय। मगर इससे भी जरूरी यह है कि विकास-आयुक्त लोगों के साथ इन्सानी तरीके से पेश आयें, उनके साथ दोस्ताना ढंग से बात करें, उनकी इच्छाओं की जानकारी लें और अपनी राय उन्हें बतायें कि यह उनका अपना काम है, उन-पर थोपा नहीं गया है और न ऊपर से कुछ इनाम के तौर पर उन्हें दिया गया है। आप उन्हें बतायें कि यह एक सहकारी प्रयास की योजना है। उसके जरिये किस तरह उनका, उनके बच्चों और बच्चों के बच्चों का, भला होगा। आप किसी-न-किसी तरह उनसे मेल-मिलाप करें, उनके दिल और दिमाग को छुयें और उन्हें अपने साथ काम करने के लिए बुलाया करें, अपने आदेश से नहीं, बल्कि अपने साथ काम करने के लिए बुलायें। इस तरह आप धीरे-धीरे एक तरह के भाईचारे का काम करने-वालों की मण्डली बना लेंगे।

मैं अपने देशवासियों के बारे में अपनी जानकारी की बुनियाद पर बोल रहा हूं। मैं उनकी बुरी बातों की बुराई करने से नहीं डरता। मैंने अभी-अभी उन्हें सुस्त वगैरा कहा है। मगर मैं बिल्कुल ईमानदारी के साथ यह मानता हूं कि हिन्दुस्तान के लोग बहुत अच्छे हैं और मौका मिलने पर वे बड़े-बड़े काम कर सकते हैं। लोगों की इस बड़ी आबादी को किस तरह काम करने का मौका दिया जाय, यह मसला है। आप सबको एक साथ मौका नहीं दे सकते, भले ही आप उसकी कोई भी योजना क्यों न बनायें। बेशक, आपको योजना हर आदमी के लिए बनानी होगी। जो योजना सबके लिए नहीं होगी, वह सही योजना नहीं होगी। आपको यह लक्ष्य हमेशा अपने सामने रखना होगा

और अपने आखिरी लक्ष्य की ओर अगला कदम उठाने का आधार तैयार करना होगा। इस तरह आप काम में ऐसी हरकत पैदा देंगे, जो अपने-आप बढ़ती और फैलती चली जायगी। मान लीजिये, आप आज पचपन सामुदायिक परियोजनाओं की शुरुआत करते हैं और अगले साल आप सौ या उससे कम-ज्यादा परियोजनाओं को हाथ में लेने की योजना बनाते हैं और यह सिलसिला जारी रखते हैं। आप चाहते हैं कि यह संख्या बढ़ती चली जाय और अगले पांच या छह सालों में पांच-छह सौ और केन्द्र शुरू हो जायं।

यह अपने-आपमें बहुत बड़ी बात होगी। मुमकिन है, वह हमारी आबादी के बहुत बड़े भाग को अपने दायरे में ले ले। मगर मैं इससे कुछ जुदा बात के बारे में सोच रहा था। एक इलाके के करीब सौ गांवों के एक केन्द्र को ले लीजिये। आप वहां सघन रूप में जो कुछ करेंगे, उसका असर आस-पास के गांवों पर पड़ेगा। अगर काम बहुत ज्यादा सरकारी ढंग से होगा तो ऊपरवाली बात नहीं होगी। जो कुछ आपके सामने फौरन नज़र आता है, उससे आगे वह काम नहीं बढ़ेगा। यह काम बहुत तंग नहीं होना चाहिए, बल्कि उसके भीतर खुद बढ़ने के तत्व मौजूद होने चाहिए। यह तभी मुमकिन होगा, जब आप लोगों की सोचने की ताकत को जगा सकेंगे। तब उस काम का अपने-आप विकास होगा। हमेशा एक खतरा रहता है कि आदेश देकर और सत्ता के द्वारा हम योजना को सरकारी मशीनरी का एक भाग बनाकर कठोर बना देते हैं, लचकीली नहीं। मैं खुद इसका अक्सर दोषी होता हूं। सरकारी तंत्र मेरे खयाल से जरूरी

हैं। उनसे जो भी भला होता हो, पर खुद चलनेंवाली और जानदार योजनाओं पर उनका बुरा असर होता है। इस तरीके से काम किया गया तो सामुदायिक परियोजनाएं कभी फले-फूलेंगी नहीं। आपको हमेशा आत्म-प्रेरणा का खयाल रखना होगा।

इस तरह की परियोजना उस हद तक कामयाब या नाकामयाब होगी, जिस हद तक कि आप एक तयशुदा समय में नतीजा हासिल कर सकेंगे। बेशक, जब आप लोगों के पास जाते हैं तो कुछ अस्पष्टता होती है, मगर एक बात के बारे में तय होना चाहिए, वह यह कि कोई काम कितने समय में पूरा कर लिया जायगा। अगर आप इस लक्ष्य को पूरा नहीं करते तो उस हद तक आप नाकामयाब रहेंगे।

दरअसल आपको कुछ सामुदायिक केन्द्र नहीं चलाना है, बल्कि आपको सबसे बड़े समुदाय के लिए काम करना है और वह समुदाय हिन्दुस्तान के लोगों का है, खास तौर पर वे लोग, जो दबे हुए हैं, बहिष्कृत हैं, पिछड़े हुए हैं। इस देश में पिछड़े हुए लोगों की संख्या बहुत बड़ी है। परिगणित जाति और परिगणित आदिवासी-संस्थाओं के अलावा पिछड़ी जाति संघ नामक एक संस्था है। असल में आप निश्चयपूर्वक कह सकते हैं कि हिन्दुस्तान के ९६ प्रतिशत लोग पिछड़े हैं। पिछड़े लोग बहुत अधिक हैं, मुट्ठी-भर लोगों के अलावा ज्यादातर लोग पिछड़े हैं। जो हो, हमें उन लोगों का खास विचार करना है जो ज्यादा पिछड़े हैं, क्योंकि हमें धीमे-धीमे अवसरों की समानता और दूसरे लक्ष्य हासिल करने हैं। आज की दुनिया में आप ज्यादा समय ऊंचे वर्गों और नीचे की श्रेणियों के बीच मौजूदा चौड़ी

खाई को बनी नहीं रहने दे सकते। बेशक, आप सब आदमियों को समान नहीं बना सकते। मगर हमें उनको कम-से-कम अवसर की समानता देनी होगी। इसलिए मैं उम्मीद करता हूं कि ये सामुदायिक केन्द्र सिर्फ अच्छे और सबसे अधिक अनुकूल स्थानों को चुनकर उन्हें ही विकसित करने में मदद नहीं देंगे, बल्कि ऐसे स्थानों की समस्याओं को हल करने की भी कोशिश करेंगे, जो आर्थिक, सामाजिक और अन्य दृष्टियों से पिछड़े हैं और इस तरह जुदा-जुदा स्थानों और हिन्दुस्तान की हालत का खूब तजरबा हासिल करेंगे, ताकि पिछड़ेपन का यह बड़ा मसला सबसे अच्छे और सबसे जल्दी मुमकिन तरीके से हल हो सके।[1]

---

१ विकास-आयुक्त सम्मेलन, दिल्ली का उद्घाटन-भाषण, ७ मई, १९५२

: २ :

वीज से पौधे का विकास

जिस वड़े काम की हम शुरुआत करने जा रहे हैं, उसकी मुल्क के लिए भारी अहमियत है। वह वड़ा काम क्या है, जिसके लिए आप सव अलग-अलग राज्यों द्वारा चुने जाकर यहां आये हैं ? जिन लोगों को वड़े काम के लिए चुना गया है, उनके सिर पर खास जिम्मेदारी आई है। आपको इस काम के वारे में तफसील और जानकारी दी गई होगी, जोकि एक वड़ी योजना का हिस्सा है। इस योजना के पीछे एक वड़ा विचार है, क्योंकि उसके जरिये हम एक नया वीज वोने वाले हैं। यह वीज शुरू में एक पौधे का रूप लेगा और वही आगे चलकर एक वड़ा पेड़ वन जायगा और मुल्क के सभी लोगों को छाया देगा।

हमारा वड़ा मुल्क है। वड़ा होने में आसानी है तो कुछ मुश्किलें भी। आसानी इस माने में कि वड़े काम वड़े मुल्क ही कर सकते हैं और दिक्कत यह है कि वड़ी आवादी से वरतना और उसकी तावत को एक ओर लगाना आसान नहीं होता। इन सव असलियतों को समझे विना हम शायद ही यह काम कर पावेंगे।

हमें गरीवी दूर करनी है और अपने मुल्क के लोगों की हालत को सुधारना है। हमारा लक्ष्य केवल जनता के किसी एक

वर्ग को खुशहाल बनाना नहीं है। हमें यह देखना है कि ३६ करोड़ आदमी किस तरह तरक्की कर सकते हैं। यह काम कानून बनाने से नहीं हो सकता। अगर हमारी संसद् ऐसा कानून बना दे कि देश को आगे बढ़ाना है और हर काम करने लायक आदमी को काम दिया जायगा तो उससे कुछ होने-जानेवाला नहीं है। कानून ज्यादा-से-ज्यादा रास्ता साफ कर सकता है, लेकिन काम तो लोगों को ही करना होगा। वे यह काम कर सकें, इसके लिए हमें उनमें जोश पैदा करना होगा और उनके दिलों में आग जलानी होगी। हमें आइंदा समय की पूरी तस्वीर उनके सामने रखनी चाहिए, जो उनको राह दिखा सके और प्रेरित कर सके।

इस तरह के कामों को करने की कुछ शर्तें हैं। उनमें-से एक यह कि पूंजी होनी चाहिए। दुनिया में कुछ देश धनी हैं, किन्तु हमारा देश गरीब है। दरअसल हिन्दुस्तान गरीब नहीं है, क्योंकि किसी मुल्क की सच्ची दौलत उसके लोग ही होते हैं। आखिरकार वही तो दौलत पैदा करते हैं।

जिस योजना के मातहत आप काम करेंगे, उसमें मुझे बताया गया है कि ५५ परियोजना-क्षेत्र चुने गए हैं। यह सामुदायिक विकास-कार्यक्रम की शुरुआत ही है। मुमकिन है, हम आगे चलकर चार-पांच सौ ऐसे केन्द्र चलायंगे। यह बहुत बड़ा काम है। आप उसमें साझीदार होंगे और आखिर में देश के कुल ३६ करोड़ आदमी उसमें आपके साथ शामिल होंगे।

आप प्रशिक्षण प्राप्त करने नीलोखेड़ी आये हैं। बहुत-से सामाजिक कार्यकर्त्ता देहातों में जाते हैं, भाषण देते हैं और घर लौट आते हैं। वे सोचते हैं कि हमने खासा अच्छा काम कर डाला, किन्तु

इस तरह के काम की कोई कीमत नहीं। जहां कहीं आप जायं, जिन लोगों से आप मिलें, उनसे आपको कुछ-न-कुछ सीखना होगा। इसमें शक नहीं कि आपको उनको रास्ता दिखानेवाला बनना है, मगर आपको उनसे उतना ही सीखना है, जितना कि आप उन्हें सिखाने के लिए उत्सुक हो सकते हैं।

हमारे मुल्क में एक अजीब खयाल फैला हुआ है कि शरीर-श्रम करना हमारी शान के खिलाफ है और इस तरह का काम नीची जातियों को करना चाहिए। हम सब लोगों को बराबर मानते हैं और सबको बराबर का मौका देना चाहते हैं। हम किसी उपयोगी काम को नीचा नहीं समझते। रूस, चीन, अमरीका और इंगलैंड जैसे देशों में, उनकी नीति या राजनैतिक विचार-धारा कुछ भी हो, श्रम की पूरी तरह इज़्ज़त की जाती है। मैं महसूस करता हूं कि जो आदमी अपने हाथों से काम नहीं करता और इस तरह के काम को इज़्ज़त का काम नहीं समझता, वह आलसी है, भले ही वह हर बात में कितना ही कामयाब क्यों न हो। मेरी यह सच्ची राय है कि हरेक हिन्दुस्तानी विद्यार्थी को, चाहे वह स्कूल में पढ़ता हो या कालेज में, खेतों या कार-खानों, में काफी शरीर-श्रम करना चाहिए।

आज हम जो बीज बो रहे हैं, वह जल्दी ही धरती में उगेगा, और पौधे की शक्ल लेगा। पहले बीज डालनेवालों की हैसियत से आपकी भारी जिम्मेदारी है। आपको सीखना है और जोश से काम करना है, क्योंकि उसी हालत में आप अपनी ताकत का अच्छे-से-अच्छा इस्तेमाल कर सकेंगे। कोई ३२ बरस पहले इस देश में एक बड़े आन्दोलन की शुरुआत हुई थी। महात्मा गांधी

लड़कियों सभीको करना होगा। मैं आपको अपनी शुभ कामनाएं भेजता हूं। मैं आपके बीच नहीं आ पाया, किन्तु मैं यह संदेश भेज रहा हूं। आप सफलता की उम्मीद रखते हुए अपना काम शुरू कर सकते हैं, आपकी रिपोर्ट मेरे सामने रखी जायगी और मैं उसे पढ़ लूंगा। आपके काम में मेरा मन बसा हुआ है और मैं उसकी प्रगति को बड़ी दिलचस्पी से देखता रहूंगा।[1]

---

१. परियोजना अधिकारी प्रशिक्षण शिविर, नीलोखेड़ी के उद्घाटन-अवसर पर दिया गया संदेश।

: ३ :

जानदार नेतृत्व की ज़रूरत

आपने नीलोखेड़ी में अपने प्रशिक्षण के चार सप्ताह पूरे कर लिये। बेशक, यह समय थोड़ा था, लेकिन अगर उसे ठीक तरह बिताया गया हो तो उसे लाभदायक समझा जा सकता है। विचार करने की बात यह है कि इस कैंप ने आपपर क्या असर डाला है?

आपको अपना दिल टटोलना चाहिए और यह मालूम करना चाहिए कि क्या आप अपने राज्यों को जिहादी जोश लेकर या मिशनरी बनकर लौट रहे हैं। कामों का सरकारी तरीका उससे बिल्कुल जुदा है, जो मिशनरी भावना से पैदा होता है, क्योंकि सरकारी तरीका उसकी कुछ खूबियों के बावजूद जड़ता पैदा करता है। जब कोई नया काम नये तरीके से करना हो तो उसकी तयशुदा प्रणाली खास तौर से मुनासिब नहीं होती। ऐसे मामलों में सरकारी तरीके की खूबियां उसकी कमियों में बदल जाती हैं, क्योंकि वह अपने ही खास ढंग पर चलता है।

हमारी विकास-योजनाएं कागज़ पर बिल्कुल ठीक हैं, मगर कोई नहीं कह सकता कि उनपर अमल किस तरह होगा। हिन्दुस्तान में उसूल और उसके अमल में इतना ज्यादा फर्क है क एक ओर आदर्श तो आसमानी होते हैं और दूसरी ओर उन-

पर अमल बहुत थोड़ा होता है। उसूल की नज़र से हम पहले दर्जे में हैं, मगर अमल में हम अक्सर दूसरे देशों से कहीं ज़्यादा पीछे हैं, जिनके आदर्श हमारे आदर्श के मुकाबले कहीं नीचे हैं। लोग महात्मा गांधी की पूजा करते हैं, मगर उनकी पूजा करने से क्या फायदा, जब हम उनकी शिक्षाओं और विचार के मुताबिक चलते नहीं हैं? उसूल और अमल में कोई फर्क नहीं होना चाहिए।

तीस वर्ष पहले एक आदमी हिन्दुस्तानी जनता में ऐसी 'आत्मिक शक्ति' पैदा कर सका कि आखिर में विदेशी सरकार को घुटने टेकने पड़े। मगर हम गुज़रे जमाने में जिंदा नहीं रह सकते। आज हमारे सामने सवाल यह है कि वह आत्मिक शक्ति और काम करने की प्रेरणा कैसे पैदा की जाय। यह योजना-आयोग का काम नहीं है। कोई भी योजना-संगठन बड़ी आबादी की ताकतों का नियोजन नहीं कर सकता।

महात्मा गांधी का वह जादू-भरा व्यक्तित्व था, जो लाखों-करोड़ों लोगों को उभार सका और उनके जरिये बड़े काम करा सका। इस तरह की बात हर रोज नहीं हुआ करती। मगर, अगर हम उस आत्मिक शक्ति को थोड़ा-बहुत भी जगा सकें तो वह चमत्कार दिखा सकती है।

मगर आज़ादी की लड़ाई और सरकार के जरिये चलाई जानेवाली रचनात्मक प्रवृत्ति की बराबरी नहीं है, क्योंकि गांधी-जी के आन्दोलन का मकसद परदेशी सरकार को हटाना था और सामुदायिक परियोजनाओं का काम पूरी तरह रचनात्मक

और एक तरह से मुश्किल है। मगर राष्ट्र को बनाने का यह काम एक जबर्दस्त चीज़ है।

मुझे यह देखकर गर्व होता है कि हिन्दुस्तानी इंजीनियरों का एक अच्छा दल दामोदर घाटी में बहुत अच्छा काम कर रहा है। किन्तु मुझे यह जानकर अफसोस हुआ कि मुल्क को बनाने की इस योजना में लगे हुए हज़ारों मज़दूर यह नहीं जानते कि वे क्या कर रहे हैं और जिस बड़े काम में वे हिस्सा बंटा रहे हैं, उसके बारे में उनकी कोई कल्पना नहीं है। मैंने इन मज़दूरों की सभा बुलाई और उन्हें दामोदर घाटी निगम के मकसदों की जानकारी दी। उन्हें बताया कि किस तरह इस योजना से लाखों एकड़ ज़मीन में खेती हो सकेगी, बाढ़ से होनेवाली तबाही रुक जायगी, लाखों घरों और कारखानों में बिजली पहुंच जायगी और लोगों के रहन-सहन का दर्जा ऊंचा उठ सकेगा। लोगों को यह जानकर खुशी हुई कि वे एक बड़े काम में हिस्सा ले रहे हैं—उनके चेहरों पर आशा और गर्व की चमक पैदा हो गई।

नीचे-से-नीची सीढ़ी पर काम करनेवाले मज़दूर को यह महसूस कराया जाना चाहिए कि वह इस मुल्क को बनाने की बड़ी कोशिश में भागीदार है। उसे अपने काम में गर्व की भावना महसूस होनी चाहिए। मज़दूरों में यह भावना पैदा करने के लिए यह जरूरी है कि परियोजना-अफसर स्वयं अपने में वह भावना पैदा करें। दूसरों में बिजली की लहर पैदा करने के पहले अपने में बिजली की ताकत पैदा होनी चाहिए,

दूसरों को जानदार बनाने के पहले आपको खुद जानदार बनना होगा।

मगर यह आत्मिक शक्ति जिसे जगाना है, यह प्राण-शक्ति जिसे फिर से जिंदा करना है, ज्यादा उपयोगी साबित नहीं होगी, अगर हम काम को करने का सही तरीका नहीं जानेंगे। इस तरह काम करने के तरीके का सवाल उठता है। आज के समय में, पच्छिम में तकनीकी शास्त्र में भारी प्रगति हुई है और हमें उसका लाभ उठाना चाहिए। पच्छिम की तकनीकी प्रगति के कारण ही खास तौर पर हिन्दुस्तान को उसके सामने हार खानी पड़ी थी।

हिन्दुस्तान ने तकनीकी शास्त्र की ओर कोई गौर नहीं किया। इसका नतीजा यह हुआ कि दर्शन के विषय में नहीं, किन्तु व्यावहारिक तकनीकी विषय में विचारों का विकास रुक गया, लंगड़ा गया और हमारे नज़रिये को तंग बना दिया। जिन लोगों ने भारतीय इतिहास के पुराने जमानों में समुद्रों को पार किया और अपना व्यापार पच्छिम में यूरोप और पूरब में जापान तक फैलाया और जिनको दर्शन और धर्म ने पहाड़ों और समुद्रों को पार करके हजारों मील दूर मर्दों और औरतों के दिलों पर शासन किया, उन लोगों के लिए यह एक असाधारण बात थी।

मौजूदा जमाने में बिना तकनीकी शास्त्र के काफी ज्ञान के तरक्की नहीं की जा सकती। इस सदी के पहले हिस्से के बिजली के जमाने की दुनिया आणविक जमाने में पहुंच गई है और इस जमाने में हमें तकनीकी शास्त्र में अव्वल दर्जे का होना चाहिए।

हमने इस क्षेत्र में कुछ प्रगति की है। आजादी के बाद अनेक राष्ट्रीय प्रयोगशालाएं कायम की गई हैं, जो वैज्ञानिक शोध की भावना को फिर से जिंदा करेंगी और जिसे वैज्ञानिक मनोवृत्ति कहते हैं, उसका विकास करेंगी।

इस ज्ञान का प्रसार करने के लिए तकनीकी शास्त्र का ज्ञान कराया जाना चाहिए, किन्तु परियोजना अफसरों को किसी तरह के घमण्ड या बड़प्पन की भावना से काम नहीं लेना चाहिए। आप किसी भ्रम में न रहें। औसत किसान आपसे ज्यादा जानता है, क्योंकि उसके ज्ञान के पीछे अनुभव है। अगर आप उसे ज्यादा अच्छा तरीका बताना चाहते हैं तो आप उसके पास विनम्र भावना से जाइये और अगर आप उसे ज्यादा अच्छे तरीके बता सकेंगे तो वह निश्चय ही आपका आभारी होगा और उन्हें अपना लेगा।

इसलिए सवाल यह है कि आप दोस्ताना और हमदर्दी के बर्ताव से गांववाले को अपनी ओर खींचें, उसमें श्रद्धा पैदा करें। श्रद्धा जरूरी है, क्योंकि शक्की आदमी, चाहे वह कितना ही प्रतिभाशाली क्यों न हो, कभी भी कोई बड़ा काम नहीं कर सकता, क्योंकि अपनी प्रतिभा के बावजूद उसमें वह गति, शक्ति और श्रद्धा नहीं होती, जो पहाड़ों को हिला सकती है।

हिन्दुस्तान की सरकार ने जो पचपन सामुदायिक परियोजनाएं चुनी हैं, वे करीब १७,००० गांवों को अपने दायरे में लेंगी। सारे हिन्दुस्तान के छह लाख गांवों को ध्यान में रखें तो पचपन परियोजनाएं निस्बतन कम मालूम होती हैं, किन्तु अगर उन्हें कामयाबी के साथ चलाया गया तो आस-

पास के क्षेत्रों पर उनका भारी असर पड़ेगा। सामुदायिक परियोजना का विचार एक बीज है और अगर बीज जम गया तो वह एक विशाल वृक्ष बनकर रहेगा।

बेशक, केन्द्रीय और राज्य सरकारों द्वारा चलाई जानेवाली परियोजनाएं महत्वपूर्ण हैं, मगर वे फौरन सब लोगों को गहराई से नहीं छूतीं। लाखों गांववालों का सीधा सम्पर्क तभी प्राप्त किया जा सकता है जब हम अनगिनत छोटी-छोटी योजनाओं को हाथ में लेंगे, जिनमें लाखों आदमी भाग ले सकेंगे। उस नजरिये से हमने सामुदायिक परियोजनाओं का विचार किया है, हम अच्छे नतीजे हासिल करना चाहते हैं और सामुदायिक परियोजनाओं पर खर्च होनेवाले पैसे को हम पूंजी लगाना मानते हैं, क्योंकि कुछ समय बाद उससे कुछ ऐसी गति पैदा होगी, जो अपने-आप लाभ देगी। दरअसल, वह बहुत बड़ी तब्दीली लायगी। मगर यह तब्दीली बिना किसी टकराव के आयगी।

आदेशों के जरिये दौलत पैदा नहीं की जा सकती, वह तो मेहनत से ही पैदा की जा सकती है। हिन्दुस्तान की समस्या अधिक दौलत पैदा करने की है। सामुदायिक परियोजनाओं में शान्तिपूर्ण रचनात्मक प्रयास का विचार समाया हुआ है और इस वजह से अगर वह पूरी तरह सफल न भी हो तो वह वैसा उल्टा असर पैदा नहीं करेगा, जो टकराव के तरीके से पैदा हो सकता है। दूसरे, सामुदायिक विकास-कार्यक्रम में कुछ ऐसी बड़ी सम्भावना है कि नीचे से विकास हो सकेगा। यह अहम बात है, क्योंकि इस बुनियादी विचार को अच्छी तरह समझे बिना सामुदायिक विकास गलती की ओर जा सकता है।

यह विचार तीन लाइनों पर विकसित किया जाना चाहिए। एक तो यह कि आदमी को सुधारा जाय और दूसरे, छोटे मामले में उसकी तकनीक को सुधारा जाय। तीसरे, गांववाले को यह समझाना बहुत जरूरी है कि वह अपनी किस्मत को बनानेवाला खुद है। उसे यह मनोवृत्ति छोड़नी होगी, जिसके मुताबिक जब-तब वह यह सोचता है कि सरकार ही उसके लिए सबकुछ कर देगी।

हम दुनिया के इतिहास के एक बहुत ही दिलचस्प और लुभावने जमाने में रह रहे हैं। हम सिर्फ तमाशा देखनेवाले बनकर या दूसरों के हाथ के खिलौने बनकर नहीं रहना चाहते। मेरे मन के परदे पर अनेक तस्वीरें बन रही हैं। हमारी देश की कल्पना भी कुछ अनोखी है। देश तगंदिली की नुमाइंदगी नहीं करता। उसने पुराने जमाने में बड़े अच्छे-अच्छे काम किये हैं और उसने बुरे काम भी बड़े ही किये हैं। अब हमें सामुदायिक विकास-कार्यक्रम में अच्छे काम बड़े पैमाने पर करने का मौका मिला है और मुझे उम्मीद है कि हर आदमी मौके के हिसाब से ऊंचा उठेगा।

हमारे लोगों में, खासकर बीच के वर्ग में, जिंदादिली की कुछ कमी है। यह बुरी निशानी है, क्योंकि हम बड़ी तेजी से बदलनेवाले जमाने में रहते हैं। यह कहना एक सामान्य बात होगी, लेकिन सही बात यह है कि हिन्दुस्तान और दुनिया एक बड़े बदलते दौर में से गुज़र रही है। हमें इस बदलते हुए जमाने के मुताबिक बनना होगा।

: ४ :

पवित्र काम

आज शुभ दिन है और हम पवित्र काम करने के लिए यहां आये हैं। आप मेरा, राष्ट्रपति का या और किसीका भाषण सुनने नहीं आये हैं। आप एक बड़े काम को पूरा करने आये हैं। इस मौके पर कोई भाषण नहीं होता तो मुझे अच्छा लगता। हमारे देश में भाषणों की भरमार रहती है। मैंने भी बहुत सारे भाषण दिये हैं। हम अपने काम के बारे में ज्यादा नहीं सोचते, बल्कि इसके बजाय सलाह देने और कमियां निकालने के लिए हमेशा तैयार रहते हैं। आज हम जिस काम की शुरुआत करने जा रहे हैं, उसमें मातृभूमि की सेवा है, उस भूमि की सेवा है, जिसके हम सब अंग हैं। हमें कड़ी मेहनत करके, पसीना बहाकर, उसकी सेवा करनी चाहिए। जरूरी होने पर हम अपना खून भी बहायेंगे, ताकि हमारे करोड़ों देशवासी आगे बढ़ सकें और उनकी मुसीबतों और परेशानियों का खात्मा हो सके।

आज का दिन शुभ क्यों है ? इसलिए कि आज गांधी-जयन्ती का दिन है। महात्मा गांधी की शिक्षाओं पर चलने की कोशिश करके हम इस दिन की पवित्रता और भी बढ़ा सकते हैं। गांधीजी ने हमें अनेक पाठ पढ़ाये हैं, किन्तु मुख्य रूप से उन्होंने काम करने और सेवा करने का पाठ पढ़ाया। बहस-

मुबाहसा जरूरी है और होना भी चाहिए। मगर आखिर में कोई देश काम से ऊंचा उठता है, कोरी बातों से नहीं। आप लोग काम में विश्वास करते हैं और इस तरह मैं आपको कोई पाठ नहीं पढ़ा सकता। किन्तु मेरे जैसे आदमियों को, जो शहरों से आते हैं, बिना किसी दिखावे के चुपचाप काम करना सीखना चाहिए। काम अपनी बात खुद कहेगा।

आज हम अलीपुर में ही नहीं, हिन्दुस्तान के अनेक हिस्सों में जिस काम की शुरुआत कर रहे हैं, उसका बहुत ज्यादा महत्व है। यह केवल तड़क-भड़क दिखाने का कोई एक और मौका नहीं है। आप अपनी गृहस्थी चलाने के लिए काम करते हैं। इसी तरह किसी देश के मामलों का इंतजाम काम से ही होता है, बेकार की बातों से नहीं। अब हम एक बड़ी क्रान्ति करना चाहते हैं—सहकारिता पर आधारित शान्तिमय क्रान्ति। हम गड़बड़ी फैलाना या सिर फोड़ना नहीं चाहते। इसी तरह हम अपने देश की हालत को बदलेंगे। हम अपने देश की बुराइयों को शान्तिमय तरीके से दूर करेंगे और ज्यादा अच्छा समाज बनायेंगे। आपमें से हरेक को कोई-न-कोई शिकायत हो सकती है और मेरा दिल भारी और शोक से भरा है। हमारे देश में एक खराब बात यह है कि हम बात बहुत ज्यादा करते हैं। हम-में कमजोरियां हैं और हमारे देश में अनेक कमियां हैं। उन्हें महज़ शिकायत करके दूर नहीं किया जा सकता, उसके लिए कड़ी मेहनत करनी होगी। मुझे उम्मीद और भरोसा है कि आज २ अक्तूबर को गांधी-जयन्ती पर हम जो काम शुरू कर रहे हैं, वह अच्छी तरह से किया जायगा। मैं आशा करता हूं कि उसमें

तरक्की होगी, वह देश की शक्ल बदल देगा और क्रांति लायगा। इस काम में अमरीका-जैसे बड़े देश ने हमारी मदद की है। किन्तु यह याद रखिये कि कोई भी देश केवल बाहरी मदद से आगे नहीं बढ़ सकता। अखीर में, देश अपनी ही ताकत और काम से आगे बढ़ता है। हम दूसरे आदमी की ताकत से कैसे अपना काम पूरा कर सकते हैं और लड़ाई जीत सकते हैं? हमारे सामने जो काम है, वह हमारी ताकत की कसौटी करनेवाला है। इसलिए हम इस पवित्र काम की शुरुआत करें और पूरे जोश से उसे जारी रखें, ताकि हमारा देश सुखी और खुशहाल हो सके।[1]

१. सामुदायिक विकास परियोजना का शुभारम्भ करते हुए दिया गया भाषण, २ अक्तूबर, १९५२

: ५ :

प्रेरक शक्ति

सामुदायिक कार्यक्रम एक ऐसा बिजलीघर है, जो पांचसाला योजना को कामयाबी से पूरा करने के लिए प्रेरक शक्ति देता है। सामुदायिक विकास-कार्यक्रम का मकसद औसत आदमी के रहन-सहन की आम सतह को ऊंचा उठाना है। हिन्दुस्तान के हालात में यह एकदम क्रान्तिकारी लक्ष्य है। यह बड़े महत्व का सवाल है कि हम यह क्रान्ति शान्तिमय और सहकारी ढंग से कर सकते हैं या नहीं, क्योंकि हिंसक तरीकों में शुरू में भारी कीमत चुकानी होती है और उनका आखिरी नतीजा बिल्कुल अनिश्चित होता है।

तेजी से बदलती दुनिया में हिन्दुस्तान का एक ठोस अस्तित्व है। मगर, यदि लोग कड़ी मेहनत नहीं करेंगे तो उसका ठोसपन चला जायगा। इसलिए हमें सतर्क होना पड़ेगा और अपनी आजादी को आर्थिक विकास के ज़रिए कायम रखने और मजबूत बनाने के लिए कड़ी मेहनत करनी होगी। यह आर्थिक विकास बुनियादी है। पांचसाला योजना सीमित साधनों की वजह से बहुत दूर यानी हालात के मुकाबले देश को आगे नहीं ले जा सकी, परन्तु उसका तरीका बहुत अच्छा था। लोगों को अपनी कोशिश से उसे आगे ले जाना चाहिए। इस कोशिश में सामु-

दायिक विकास-कार्यक्रम और जल्दी ही परिपूर्ण होनेवाली राष्ट्रीय विस्तार-सेवा का बहुत जरूरी योग होगा । यदि इन कार्यक्रमों के अमल से लोगों के नजरिये में तब्दीली लाई जा सके तो हम काफ़ी मंजिल तय कर लेंगे, क्योंकि लोगों के नजरिये में तब्दीली के साथ परिवर्तन की रफ्तार कहीं ज्यादा तेज हो सकेगी ।

मौजूदा दुनिया की सबसे बड़ी क्रान्ति तकनीकी क्रान्ति है, जिसने इसकी शक्ल को पूरी तरह बदल दिया है । तकनीकी शास्त्र के मानी होते हैं ताकत, मगर इसका पूरा लाभ उठाने के लिए हमारी बुद्धि को इतिहास की रोशनी में उसका महत्व समझने के लिए तैयार होना पड़ेगा और उसका मौजूदा हालात की ज़रूरतों के साथ तालमेल बिठाना होगा ।

हिन्दुस्तान नाजुक दौर में से गुजर रहा है । परदेशी शासन से एक आज़ाद, खुशहाल राष्ट्र बनने का यह तब्दीली का दौर है । जब मुल्क से परदेशी हुकूमत का खात्मा हुआ, तो वह कुछ बनावटी नमूने पीछे छोड़ गई । देशी राजा उनमें से एक थे । इस वर्ग का तेजी से पतन हुआ । दरअसल, जिस तेजी से उसका पतन हुआ, उसे देखकर दुनिया हैरत में रह गई । इसकी ख़ास वजह यह थी कि राजाओं की संस्था दिखावटी ढंग पर खड़ी थी और उसकी अपनी कोई बुनियादी ताकत नहीं थी । जिस सहारे वह खड़ी थी, उसके खिसकते ही वह लड़खड़ाकर गिर पड़ी । फिर भी तब्दीली के इस चक्र को पूरा होने में कुछ समय लगता है और तब्दीली का दौर लाज़मी तौर से कुछ तकलीफदेह होता है ।

फिर परदेशी राज के खात्मे से हर तरह की ताकतें उभरीं, जिन्हें अबतक दबाकर रखा गया था। इन ताकतों पर नाराज होना बेकार है। हमें अनेक मोर्चों पर क्रान्ति करनी होगी। किन्तु इस क्रान्ति का मतलब यह नहीं कि हम सिर फोड़ें। हमें ऐसी हालत पैदा करनी होगी कि नजरिया बदले, मगर हमें क्रान्ति की रफ्तार और हालात के बीच तालमेल बैठाना होगा। अगर रफ्तार बहुत तेज होगी तो प्रतिक्रान्ति हो सकती है। इसके बदले प्रगति काफी तेज होनी चाहिए, क्योंकि लोग अनिश्चित काल तक इन्तजार करने को राजी नहीं होंगे।

ऊपर की बातों को ध्यान में रखते हुए आर्थिक मसलों का बड़ा भारी महत्व हो जाता है, सिर्फ इसलिए नहीं कि रहन-सहन का ऊंचा स्तर सुखी जीवन की निशानी होता है, बल्कि इसलिए भी कि राष्ट्र की आखिरी ताकत आर्थिक ताकत ही होती है। आखिरी बात यह है कि किसी देश की सशस्त्र सेना उसकी ताकत का एक हिस्सा होती है, उसकी बाकी ताकत आर्थिक ताकत और जनता के मनोबल में रहती है। आर्थिक दृष्टि से देश को मजबूत बनाकर उन शक्तियों को सन्तुष्ट किया जा सकता है, जो आजादी के कारण छूटी और उभरी हैं, क्योंकि रहन-सहन का स्तर ऊंचा उठाकर और ज्यादा रोज़गार और ज्यादा इस्तेमाल की चीजें मुहय्या करके ही लोगों की जरूरतों को पूरा किया जा सकेगा।

मगर चीजों के बड़े उत्पादन से ही रहन-सहन का स्तर ऊंचा नहीं उठ सकता। उसके लिए बड़े पैमाने पर उपभोग भी जरूरी होगा। दूसरे शब्दों में आम जनता की खरीदने की ताकत

को बढ़ाना होगा। जनता की खरीदने की ताकत बढ़ाने का सबसे आसान तरीका यह होगा कि रोजगार सुलभ किया जाय और इसके लिए औद्योगिक तंत्र को गतिशील बनाना होगा।

बड़े और छोटे उद्योगों में बुनियादी टकराव नहीं, क्योंकि काफी औद्योगिक विस्तार हो चुकने के बाद भी बहुत बड़ा क्षेत्र अछूता बचा रहेगा। मगर यहां भी तकनीकी शास्त्र का महत्व है, क्योंकि छोटे उद्योग तभी जिन्दा रह और पनप सकेंगे, जब उनकी तकनीक अच्छी होगी। इसमें कोई शक नहीं कि उनकी तकनीक में सुधार किया जा सकता है और यह जरूरी है कि लोग नई तकनीक को अपनायें। हिन्दुस्तान में तकनीकी तरक्की से फायदा उठाने की बहुत ज्यादा गुंजाइश है। मिसाल के लिए, यदि गेहूं की पैदावार फी एकड़ १० मन से बढ़ाकर करीब १५ मन कर ली जाय—अनेक प्रगतिशील देशों की उत्पादन-दर से यह फिर भी काफी कम होगी—तो हमारे देश की हालत में काफी बड़ा फर्क आ जायगा। सघन खेती के तरीकों और खेती-बाड़ी के नये तरीकों को अपनाकर यह लक्ष्य हासिल किया जा सकता है।

किस्मत से हिन्दुस्तान को अनेक सुविधाएं मिली हुई हैं। उनमें से एक यह है कि आजादी के पहले का राजनैतिक नेतृत्व ही उसके बाद भी चल रहा है। उसके नतीजे के तौर पर विचार और काम में कुछ सिलसिला बना हुआ है। मगर हमें प्रगति के लक्ष्यों के बारे में उदासीन नहीं होना चाहिए, क्योंकि लोग ज्यादा समय तक धीरज धरकर नहीं बैठेंगे। दूसरी ओर, लोगों को यह महसूस करना होगा कि रहन-सहन के स्तर में

फौरन सुधार करना मुश्किल है, जैसाकि प्रगतिशील देशों के विकास के इतिहास से ज़ाहिर होता है। अपनी विकास-योजनाओं के शुरू के अरसे में इन देशों को भारी कीमत चुकानी पड़ी है और कमी का सामना करना पड़ा है। हिन्दुस्तान आर्थिक विकास का कार्य लोकतन्त्री तरीके से करने की कोशिश कर रहा है। हमारे देशवासियों के लिए यह बहुत बड़ी चुनौती है। सामुदायिक कार्यक्रम और उसकी पीठ पर आनेवाला राष्ट्रीय विस्तार-सेवा-संगठन, जो ग्राम-विकास का अग्रदूत है, बुनियादी कार्यक्रम हैं और उनसे ज़ाहिर होगा कि जन-विकास का लोक-तंत्री तरीका किस तरह कामयाब हो सकता है।

: ६ :

मानव-पुरुषार्थ के केन्द्र

'कुरुक्षेत्र' पत्र का नाम हिन्दुस्तान के इतिहास के एक महान युग और बड़ी लड़ाई की याद दिलाता है। उस ऐतिहासिक मैदान में, जहां यह लड़ाई लड़ी गई, हम एक दूसरी ही किस्म की लड़ाई लड़ रहे हैं। यह लड़ाई हम अपनी कमजोरियों, गरीबी और अज्ञान तथा उससे पैदा होनेवाली सभी भयंकर बुराइयों के खिलाफ़ लड़ रहे हैं।

इतिहास की रोशनी और हिन्दुस्तान-जैसे इस बड़े देश की पृष्ठ-भूमि में हम इस लड़ाई पर विचार करें। हमारे सामने मसला बहुत ज़्यादा भयंकर है, किन्तु हमारी सहायता करनेवाले तत्व भी अनेक हैं। हमें मालूम है कि हमारे पास इस समस्या को हल करने के लिए जन-बल और अन्य साधन हैं। हमें सिर्फ उनका ठीक तरह से इस्तेमाल करना आना चाहिए।

लोग रुपये की बात करते हैं और रुपया बेशक ज़रूरी है, परन्तु आखिर में तो आदमी का ही महत्व है। मनुष्यों ने ही इतिहास को बनाया है और इन्सानियत के ध्येय को आगे बढ़ाया है, रुपये ने नहीं। अगर हम हिन्दुस्तान में सही किस्म के मनुष्यों को प्रशिक्षित और तैयार करें तो बाकी काम आसान होगा। पिछले कुछ वरसों के अनुभव से पता चलता है कि हम यह

काम कर सकते हैं और रास्ते की मुश्किलों पर भी काबू पा सकते हैं।

देश-भर में आदमी के पुरुषार्थ के केन्द्र खड़े हुए हैं, जो आस-पास के अंधकार में दीपक की भांति ज्यादा-से-ज्यादा अपनी रोशनी फैला रहे हैं। इन केन्द्रों में नीलोखेड़ी भी एक है, जिसका हिन्दुस्तान में और बाहर काफी नाम फैला है। ये ऐसी मिसालें हैं, जिनकी दूसरे नक़ल कर सकते हैं। उन्हें अपना उच्च स्तर कायम रखना चाहिए, क्योंकि आखिर में गुण का ही महत्व आंका जायगा, मात्रा का नहीं।

मैं उन सब मौन कार्यकर्त्ताओं को, जो नये हिन्दुस्तान को बनाने के बड़े काम में जुटे हैं और सारे देश में फैले हुए हैं, अपने अभिनन्दन और शुभकामनाएं भेजता हूं।[1]

---

१ 'कुरुक्षेत्र' पत्र को संदेश : २ अक्तूबर, १९५२

: ७ :

लोकतंत्री तरीका

मेरी यह खुशकिस्मती रही है कि मैं देश में घूमता हूं और लाखों-करोड़ों देशवासियों से मेरा वास्ता पड़ता है और उनके प्रति कुछ भावात्मक सम्बन्ध अनुभव करता हूं। मैं उन्हें न सिर्फ प्यार ही करता हूं, बल्कि मैं उनकी बड़ाई भी करता हूं और जहां कहीं मैं जाता हूं, मैं उनकी इज्जत करता हूं। मैं छोटे-से-छोटे किसान में आगे बढ़ने और तरक्की करने की भावना पाता हूं। मैं हिमालय के पहाड़ी क्षेत्रों के दूर बसे गांवों में जाता हूं और वहां दो बातों की मांग की जाती है—एक सड़कों की और दूसरी स्कूलों की।

यह अजीब बात है कि वे स्कूल के लिए कितने बेचैन हैं। वे एक कदम आगे बढ़कर कहते हैं, "अगर फिलहाल आपके पास साधन नहीं हैं तो हम स्कूल की इमारत खुद खड़ी कर लेंगे। आप हमें शिक्षक ही दे दीजिये।" हमारे लोगों ने पिछले बरस अपनी इच्छा से कितना काम किया है, उसे देखकर अचरज होता है। इस तरह की मेहनत से कई सौ मील लम्बी सड़कें बनाई गई हैं, जिनमें से कुछ पहाड़ी क्षेत्र में हैं, बड़ी तादाद में स्कूल और दवाखाने बनाये गए हैं और तालाब और छोटी नहरें खोदी

गई हैं। लोग काम करने के लिए बेचैन हैं, बशर्ते कि उनमें हमेशा यह भावना हो कि वे अपने ही लिए कुछ-न-कुछ कर रहे हैं।

जब वे यह महसूस करते हैं कि वे अपने ही फायदे के लिए कुछ कर रहे हैं तो वे कड़ी मेहनत करते हैं और उससे होनेवाली परेशानी की परवा नहीं करते। एक छोटे गांव में रहनेवाले किसान को शायद यह समझाना खास तौर पर आसान नहीं होता कि वह एक बड़े देश का रहनेवाला है और उसके विकास के लिए हमने पांचसाला योजना और दूसरी योजनाएं बनाई हैं। मगर मैं समझता हूं, अगर हम ठीक तरीका अपनायें तो ऐसा करना ज्यादा मुश्किल नहीं होगा। एक बार वह यह समझ ले कि वह काम में समान साझीदार है तो हम उससे कुछ भी हासिल कर सकते हैं। उससे उत्साह तो जरूर मिलेगा, बल्कि कड़ी मेहनत भी मिलेगी।

जो काम हमने हाथ में लिया है, वह बहुत बड़ा है। आखिरी बात यह है कि हिन्दुस्तान के ३६ करोड़ लोगों का स्तर ऊंचा उठाना होगा। जबतक बहुत लोग सहयोग करने को तैयार न हों, तबतक हम ऐसा नहीं कर सकेंगे। अगर आप लोकतंत्री आधार पर सोचेंगे तो आपको लोकतंत्री तरीका अपनाना होगा, आपको उनके पास जाना होगा, उन्हें हुक्म नहीं देना होगा।

लोग आज सामाजिक न्याय की भाषा में सोचते हैं। वे भाग्य अथवा किस्मत के फैसलों को कम-से-कम स्वीकार करते हैं। "चूंकि मैं गरीब हूं, इसलिए सदा गरीब रहूंगा," यह वे

स्वीकार नहीं करते। इसलिए हमें लाजमी तौर पर गरीब और अमीर की खाई को पाटना होगा। हमारा यह लक्ष्य होना चाहिए कि हरेक को तरक्की के समान अवसर मिलें।[1]

---

१. नवम्बर, १९५३

: ८ :

एक लुभावना प्रयास

मैं सामुदायिक परियोजनाओं और राष्ट्रीय विस्तार-सेवा-कार्यक्रम के विकास में गहरी दिलचस्पी रखता हूं और उन्हें भारी महत्व देता हूं। मेरे खयाल से पिछले दो सालों ने यह साबित कर दिया है कि यह प्रयोग ठीक है और जिन लोगों का इसके साथ किसी-न-किसी शक्ल में ताल्लुक है, वे और आम जनता, दोनों इस काम के महत्व को महसूस करने लगे हैं। उसका मक़सद महज इतना ही नहीं है कि कुछ चुनी हुई जगहों में कुछ सुधार हो जायं। उसका विचार कहीं ज्यादा फैला हुआ है। उसका वास्तविक लक्ष्य इस सारे बड़े मुल्क को अपने दायरे में लेना है और नीचे से लगाकर ऊपर तक एक नये हिन्दुस्तान को बनाना है। इसमें से जो लोग इस कोशिश में भागीदार हैं, उन्हें इसमें बड़प्पन और जोश महसूस करना चाहिए कि वे एक ऐतिहासिक काम में हिस्सा ले रहे हैं।

काम जितना बड़ा होगा, जिम्मेदारी भी उतनी ही ज्यादा होगी। यह काम बढ़ा है और बढ़ता जा रहा है। हिन्दुस्तान का काफी हिस्सा उसके दायरे में आ चुका है और आनेवाले बरसों में, हमें उम्मीद है कि वह इस मुल्क के हर गांव में पहुंच जायगा। बेशक, महज काम को बढ़ाने की ही ज्यादा अहमियत नहीं

होती। अहमियत इस बात की है कि काम किस किस्म का है और किस भावना से किया जा रहा है। खास तौर से हम इस बड़े देश में एक शान्तिमय किन्तु दूर तक असर करने-वाली क्रान्ति लाने की कोशिश कर रहे हैं। अगर हम काम-याब होते हैं, और कामयाब हम जरूर होंगे, तो हम अपनी पीढ़ी में कुछ ऐसा काम कर गुजरेंगे, जो कीमती होगा और जो इतिहास में लिखा जायगा। हमें बहुत सारे खतरों का सामना करना है और उनमें सबसे बड़ा खतरा है दिलचस्पी की कमी का। अगर हममें से कोई उदासीन रहता है तो वह कदम मिलाकर नहीं चलता और पंक्ति से बाहर जा पड़ता है। हम अलग-अलग क्षेत्रों में काम करते हैं, वह कोई गांव, विकास-खण्ड, परियोजना-क्षेत्र या राज्य हो सकता है, मगर हम कहीं भी काम करें, हमें यह समझना चाहिए कि हम एक बड़ी कोशिश के हिस्से बनकर काम कर रहे हैं। इसलिए हमें अपने काम को मिले हुए रूप में देखना चाहिए और उसका यह संयोजन अनेक रूपों में हो रहा है।

दरअसल आज सारी दुनिया मिला-जुला दृष्टिकोण चाहती है और अगर हम इसमें कामयाब नहीं होते तो हम टकराव और विनाश के शिकार हो सकते हैं। किन्तु इस क्षण हम दुनिया को और उसकी समस्याओं को भूल जायं और हिन्दुस्तान और उसकी समस्याओं पर ही गौर करें। वे काफी बड़ी हैं।

हम सियासी नज़रिये से ही नहीं, दिल की भावनाओं से भी एके में बंधा हिन्दुस्तान चाहते हैं। योजना का सार यह है कि अलग-अलग तरीकों के ज़रिये हम यह एका सिद्ध करें और

एके की मानी यह हैं कि हर सतह पर सहयोग हो और हम यह समझें कि सबकी कोशिश से ही तरक्की होगी। योजना का यह मतलब भी है कि केन्द्रीय सरकार और राज्य सरकारों के कामों में नजदीक का मेल हो। केन्द्र में संघीय सरकार के अलग-अलग कामों में मेल होना चाहिए। हर मंत्रालय का अपना अलग अस्तित्व नहीं है, वह हिन्दुस्तान की सरकार का एक हिस्सा है। राज्यों और केन्द्र का भी ऐसा ही ताल्लुक है। योजना बनाने, मेल और एके का यह विचार गांव, नगर और राज्य में सब कहीं फैलना चाहिए।

सामुदायिक परियोजनाओं में अनेक कामों का मेल शामिल है। इन कामों को एक-दूसरे से जुदा करके नहीं देखा जा सकता। मकसद इन्सान और उसके समूह को बनाने का है और उसकी कई तरह से तरक्की करनी है। इसलिए सामुदायिक परि-योजनाओं के कामों में नजदीकी तालमेल होना चाहिए और ऊपर की बात को नज़र में रखा जाना चाहिए।

इस काम में सरकारी अफसरों और गैर-सरकारी आदमियों, दोनों को ही अपना हिस्सा देना है। दोनों ही जरूरी हैं। अफसरों को प्रशिक्षण का अनुभव और अनुशासित सेवा देना चाहिए। गैर-सरकारी आदमियों को जनता की सही नुमाइंदगी करनी चाहिए और लोगों में वह चाह और जोश पैदा करना चाहिए, जो किसी भी आन्दोलन की जान होते हैं। अफसर को अपने भीतर नेता के गुण पैदा करने चाहिए। जो जनता के नुमाइंदे हैं, उन्हें अफसरों का अनुशासन और प्रशिक्षण ग्रहण करना चाहिए। इस तरह वे

एक-दूसरे के बराबर बनेंगे। दोनों के सामने समान ध्येय हासिल करने के लिए अनुशासित सेवा का आदर्श रहना चाहिए।

इस महान आन्दोलन को चलाने के लिए हमें ऊंचे दर्जे के नेताओं की जरूरत है। लेकिन हमें गांव के स्तर पर भी ज्यादा अच्छे आदमियों की जरूरत है। हमें हज़ारों ग्राम-नेताओं को प्रशिक्षित करना है, जिनमें पहल करने की ताकत हो और जो अपने काम में बड़प्पन महसूस करें। मुझे उम्मीद है कि यह विकास-आयुक्तों का सम्मेलन हमारी कमजोरियों पर गौर करने से डरेगा नहीं। उनपर खुले तौर से विचार करके ही हम उनसे छुटकारा पा सकेंगे। मैं यह भी उम्मीद करता हूं कि यह सम्मेलन उनमें एकता और जोश की नई लहर पैदा करेगा और उससे वे सारे हिन्दुस्तान के अपने सहयोगियों पर असर डालेंगे।[1]

---

१. उटकमण्ड में आयोजित विकास-आयुक्त-सम्मेलन को संदेश, मई, १९५४

: ६ :

लोक परियोजनाएं

तीन साल बाद विकास-आयुक्तों की चौथी कान्फ्रेंस अपने काम पर गौर करने और आइंदा योजना बनाने के लिए हो रही है। गये साल उटकमण्ड में पिछले दो बरसों के काम करने पर विचार करने के बाद उन्होंने रफ्तार तेज़ करने और सामुदायिक परियोजनाओं और राष्ट्रीय विस्तार-सेवा का ज्ञान सारे देश में फैलाने का फैसला किया था। यह बहुत हिम्मत-भरा फैसला था। किन्तु मैं यह मानकर चलता हूं कि जिन लोगों ने यह फैसला किया, उन्होंने यथार्थवादिता से काम लिया और उन्हें, काम की क्या शक्ल बनेगी, इसका पूरा पता था। असल में वे वही आदमी थे, जो इस विशाल योजना का बोझ अपने कन्धों पर उठाये हुए थे और जिन्हें मिली हुई कामयाबी और मसलों और आनेवाली दिक्कतों की पूरी जानकारी थी।

अब वे दूसरी पांचसाला योजना को बनाने के पहले इकट्ठे हुए हैं। अब से छह महीने के भीतर हम इस योजना का मसविदा पेश करने की उम्मीद करते हैं और एक साल के भीतर-भीतर योजना अपनी आखिरी शक्ल में आ जायगी और उसपर अमल होने लगेगा। मैं योजना को अन्तिम रूप देने की बात करता हूं, मगर इस तरह की योजना आखिरी या जकड़ी हुई नहीं हो

सकती। वह लचकीली और ऐसी होनी चाहिए कि उसे नये-नये तजरबों के मुताबिक बदला जाता रहे और उसमें सुधार किये जाते रहें। मगर कुछ लक्ष्य हमें नजर में रखने होंगे और उन्हें हासिल करने की कोशिश करनी होगी। जाहिरा तौर पर कुछ हदें हैं और हम अपनी उम्मीदों और चाहों को अपनी योजना के शब्दों और वाक्यों में जाहिर नहीं कर सकते। हमें आदर्शवादी होने के साथ-साथ यर्थाथवादी भी होना चाहिए। हमें अपने साधनों का अन्दाजा लगाना होगा। इन साधनों का अन्दाजा कुछ तो पिछले अनुभव की बुनियाद पर और कुछ दूसरे और अधिक अनिश्चित आधारों पर लगाना होगा। अगर हमारी तरक्की गये वक्त के मुकाबले ज्यादा तेज़ होनी है और हम उम्मीद करते हैं कि वह होनी चाहिए तो उस गुजरे वक्त में जो कुछ हमने हासिल किया है, उसीका हिसाब लगाना काफ़ी होगा। आइंदा वक्त लाजमी तौर पर गये वक्त के मुकाबले ज्यादा अच्छा होना चाहिए।

तरीके कई तरह के होते हैं—रुपया-पैसा, मेहनत और इन्सान वगैरा और जो काम सामने है, उसके लिए उनका ठीक-ठीक तालमेल होना चाहिए। जहांतक इन्सानों का ताल्लुक है, उनका योग बहुत अनिश्चित होगा। अगर हालात ठीक हों तो वह हमारे किसी भी अन्दाज़ के मुकाबले ज़्यादा हो सकता है और वह हमारे अन्दाज़ का उल्टा भी हो सकता है।

मगर अब रास्ता दिखाने के लिए हमारे पास कुछ तजरबा है और पिछले कुछ बरसों के इस तजरबे ने देश की जनता में हमारे विश्वास को बढ़ाया है, हमें अधिक आत्म-निर्भर बनाया

है और गुज़रे वक्त के मुकाबले ज्यादा बड़ी शक्ल में सोचने का हौसला दिया है।

इन कुछ बरसों में बहुत-कुछ ऐसा हुआ है, जिससे यह नतीजा आया है। किन्तु मेरे खयाल से इन बरसों की सबसे अहम घटना सामुदायिक परियोजनाओं और राष्ट्रीय विस्तार-सेवा के क्षेत्र में हुई है। अमली नतीजे जाहिर हैं और काफी बड़े हैं, किन्तु उनके अलावा और भी ज्यादा अहम नतीजा आया है, हालांकि उसे नापा या तोला नहीं जा सकता। वह चीज है लोगों का जोश, कथनी और करनी की दूरी का मिट जाना, राष्ट्रीय काम में मेल-जोल की भावना और बड़े कामों में साझेदारी की भावना।

यह नई रफ्तार को बतानेवाली चीज़ है, जो हर तरह की तरक्की के लिए ज़रूरी है। इसके यह मानी हैं कि हमारी जिन्दगी और काम के तरीकों में सामाजिक क्रांति हुई है, जो धीमे-धीमे किन्तु निश्चित रूप से इस बड़े देश में फैल रही है।

इसी वजह से सामुदायिक परियोजनाएं और राष्ट्रीय विस्तार-सेवा और किसी बात के मुकाबले हिन्दुस्तान के उभरते हुए ज़ोश की निशानियाँ बन गई हैं। उन्होंने सिर्फ हमारे लोगों को, खास तौर पर गांव के क्षेत्रों के लोगों को ही नहीं उभारा है, बल्कि दुनिया के दूसरे हिस्सों, खासकर एशिया और अफ्रीका के देशों का ध्यान अपनी ओर खींच लिया है, जिन्हें हमारे ही जैसे मसलों का मुकाबला करना पड़ रहा है। ये सामुदायिक योजनाएं किसी विदेशी योजना की नकल नहीं हैं, हालांकि दूसरे देशों से हमने बहुत-कुछ सीखा है। उनका बुनियादी तौर पर हिन्दुस्तान में

विकास हुआ है और वे हिन्दुस्तान की हालात के हिसाब से ठीक हैं और इसलिए हिन्दुस्तान की मिट्टी और लोगों के अंदर इनकी ठीक बुनियाद है। उनकी ताकत और उनकी चेतना का यही कारण है।

राष्ट्रीय विस्तार-सेवा इस काम की सारे देश में व्यापक नींव रखती है। सामुदायिक परियोजनाएं चमकदार, जानदार और गतिशील चिनगारियां हैं, जो सारे देश में फैली हुई हैं और जिनसे शक्ति, आशा और उत्साह की किरणें फूट रही हैं। दोनों ही जरूरी हैं।

देश समाजवादी ढंग की समाज बनाने के लिए बंधा हुआ है, इस रद्दो-बदल को लाने के लिए हमें अनेक क्षेत्रों में बहुत-सी बातें करनी होंगी। मगर खास बात यह है कि आजादी को सुरक्षित और चौड़ी बुनियाद पर खड़ा किया जाय, ताकि लोग सरकारी मशीनरी के ज्यादा पास आ सकें और उसके साझीदार बन सकें, खास तौर पर पंचवर्षीय योजनाओं को अमली रूप देने में। हम कहते हैं कि यह जनता की योजना है और सामुदायिक परियोजनाएं लोक-योजनाएं हैं। इस सवाल पर हमारे नजरिये का यही सार है। सिर्फ सरकारी कार्रवाई के जरिये कोई भी बड़ी रद्दो-बदल नहीं लाई जा सकती, हालांकि उसकी भी अपनी अहमियत है और हम बड़ी तब्दीली लाना चाहते हैं। इसलिए यह जरूरी है कि इन सामुदायिक योजनाओं की बुनियाद लोगों के गहरे सहयोग पर हो।[१]

---

१. विकास-आयुक्त-सम्मेलन, शिमला को सन्देश : मई, १९५५

: १० :

तेज रफ्तार

आप जानते हैं कि एक बड़ा काम जो हमने किया है और कर रहे हैं, सामुदायिक परियोजनाओं और राष्ट्रीय विस्तार-सेवा-खण्डों का है। मुझे पता नहीं कि आपमें से कितने इन क्षेत्रों में गये हैं। ग्रामीण हिन्दुस्तान में जो कुछ हो रहा है, वह सचमुच उल्लेखनीय है। बात को बिना बढ़ाये-चढ़ाये कहता हूं कि ग्रामीण हिन्दुस्तान में जहां-कहीं सामुदायिक परियोजनाएं चल रही हैं, वहां एक भारी तब्दीली आ रही है।

दूसरे देशों से आनेवाले लोग उसे देखकर हैरत में पड़े हैं, किन्तु हमारे अपने लोगों ने इसे महसूस नहीं किया है। जुदा देशों के लोग इंगलैंड, अमरीका, रूस, इण्डोनेशिया, बर्मा, पश्चिमी एशिया के देशों के लोग जुदा-जुदा नजरियों से इस विकास को देखकर अचरज में रह गये हैं, महज़ ज्यादा पैदावार या इस या उस विकास की खातिर नहीं, बल्कि इन्सानों के विकास को देखकर उन्हें अचरज हुआ है।

इसलिए मैं चाहूंगा कि आप इन परियोजनाओं और हमारे बड़े मकसदों पर गौर करें और अपनी पत्र-पत्रिकाओं वगैरा के जरिये उन्हें जनता तक पहुंचायें, क्योंकि हम लोगों को अपने साथ लेकर चलना चाहते हैं। हम जबतक हिन्दुस्तान के लाखों-

करोड़ों लोगों का हार्दिक सहयोग प्राप्त नहीं कर लेते, तबतक अपने कामों में कामयाब नहीं हो सकते। हम उसे जल्दी-से-जल्दी हासिल करना चाहते हैं। तभी हम काफी साधन पा सकेंगे और तभी हम अपने हक में हवा बना सकेंगे और आत्म-निर्भरता वग़ैरा ला सकेंगे। पिछली पांचसाला योजना की कामयाबी ने खुराक की हालत और कुछ दूसरी बातों के बारे में हमें आशा-वान बनाया है।

शुरुआत अच्छी हुई है, क्योंकि कामयाब सामुदायिक परि-योजनाओं ने इन क्षेत्रों में नई हवा पैदा कर दी है और सामुदायिक परियोजनाएं और राष्ट्रीय विस्तार-सेवा-खण्ड आज हिन्दुस्तान के एक लाख गांवों में काम कर रहे हैं। यह बड़ी संख्या है और अगले साल के अखीर में वे १,५०,००० गांवों में काम करने लगेंगे। यह तेज रफ्तार है। असल में हमारा बड़ा मसला निचली सतह पर उनके लिए कार्यकर्त्ताओं, ग्राम-सेवकों, निरीक्षकों और दूसरे लोगों को प्रशिक्षण देने का है। यह कर लेने के बाद हमारा खास मसला यह रहेगा कि परियोजनाओं और विस्तार-सेवा-खण्डों को जनता की मदद से गैर-सरकारी तरीकों के जरिये चलाया जाय।[1]

---

१. प्रेस-कान्फ्रेंस में दिया गया वक्तव्य

सबसे उल्लेखनीय घटना

मेरा खयाल है, हम यह विनम्र दावा कर सकते हैं कि हाल के वरसों में हिन्दुस्तान में इन्सानी कोशिश के अनेक क्षेत्रों में काफी कामयाबी हासिल हुई है। लेकिन मैं मानता हूं कि हिन्दुस्तान के गांव के इलाकों में सामुदायिक परियोजनाओं और राष्ट्रीय विस्तार-सेवा का विकास सबसे ज्यादा चर्चा के लायक बात हुई है। यह सचाई के साथ कहा जा सकता है कि हमने पहली मरतबा गांव के मसलों को सही तरीके से हाथ में लिया है। यह महज ऊपर से की जानेवाली कोशिश नहीं है, बल्कि लोगों को खुद अपने मसलों को हल करने के लिए उकसाया गया है। उन्हें सजीव चेतना ने प्रभावित किया, उनकी आंखों में चमक पैदा हुई, उनके हाथों ने काम करना शुरू किया और उनकी मांस-पेशियां मजबूत हुईं। नई जिन्दगी लाने की क्रिया शुरू हुई। इस बड़े देश के दूर-से-दूर बसे गांव और झोंपड़ी में वह फैल गई।

राष्ट्रीय विस्तार-सेवा एक बुनियादी संगठन है, जिसे हम सारे देश में स्थापित कर रहे हैं। किन्तु यह वह बुनियाद है, जिसपर सामुदायिक परियोजनाओं की इमारत खड़ी की जायगी। जीवन-शक्ति के अभाव में राष्ट्रीय विस्तार-सेवा एक

सामान्य संगठन बन सकता है। इसलिए यह जरूरी हो गया है कि दोनों का विकास किया जाय और सामुदायिक परियोजनाओं का भी सारे देश में विस्तार किया जाय और उन क्षेत्रों के लिए भी, जिनमें उनकी शुरुआत नहीं हुई है, मानदण्ड स्थापित किये जायं।

उम्मीद की गई थी कि सारे देश में सामुदायिक परियोजनाओं और राष्ट्रीय विस्तार-सेवा-संगठन शुरू करने का काम दूसरी पांचसाला योजना के अखीर तक पूरा हो जायगा। यह बहुत बड़ा काम है, क्योंकि इसके लिए बहुत बड़ी तादाद में कार्यकर्ताओं को सिखाकर तैयार करना होगा। हम अभी भी उस लक्ष्य को पूरा करने की उम्मीद करते हैं।

सामुदायिक परियोजनाओं के बुनियादी महत्व को देखते हुए जिन लोगों से उनका गहरा ताल्लुक है, वे यह चाहते थे कि वे देश के आधे क्षेत्र में फैल जायं। दूसरे शब्दों में पूरी कोशिश में उनका पचास फीसदी हिस्सा हो। अनेक दिक्कतें पेश की गईं और काफी बहस-मुबाहसे के बाद तय किया गया कि ४० फीसदी क्षेत्र में सामुदायिक परियोजनाओं की शुरुआत करना हमारा लक्ष्य होना चाहिए। यह फैसला हाल में राष्ट्रीय विकास परिषद ने किया है और उसी बुनियाद पर हमें काम करना है।

इस तरह हमें सारे देश में राष्ट्रीय विस्तार-सेवा को चालू करना है और उसके कम-से-कम ४० फीसदी क्षेत्र में सामुदायिक परियोजनाएं जारी कर देनी हैं। मैं उम्मीद करता हूं कि हम इस बड़ी कोशिश में कामयाब होंगे।[१]

---

१. 'कुरुक्षेत्र' के वार्षिक अंक के लिए संदेश, अक्तूबर १९५५

: १२ :

देहाती हिन्दुस्तान की बदलती शक्ल

आप कोई भी काम करें, उसे सीखना जरूरी हो जाता है। मगर वदकिस्मती से जिस काम के लिए सवसे अधिक प्रशिक्षण की जरूरत होनी चाहिए, उसकी कोई कसौटी नहीं है। वह बेतरतीब है। मेरा मतलव राजनैतिक कार्यकर्ताओं के काम से है। उनके लिए प्रशिक्षण का कोई मापदण्ड तय नहीं किया गया है। दूसरे हर तरह के कामों में निश्चित मापदण्ड हैं। वैज्ञानिक, इंजीनियरी, चिकित्सा, वढ़ईगीरी वगैरा कोई काम हो, उसमें प्रशिक्षण की जरूरत होती है। सिर्फ़ जोश के वल पर आप अच्छे वढ़ई, इंजीनियर या डाक्टर नहीं वन सकते। लेकिन सिर्फ जोश से आप एक अच्छे राजनेता वन सकते हैं। राजनेता लोगों को अपने पीछे चला सकता है। यह हालत वदकिस्मती की हालत है।

अगर हिन्दुस्तान को तरक्की करनी है तो हमें ज़िन्दगी के हर क्षेत्र में प्रशिक्षण की जरूरत होगी। प्रशिक्षण जितना ही ज़्यादा होगा, उतना ही ज़्यादा अव्वल दर्जे का हमारा राष्ट्र वन सकेगा। हमारी सामुदायिक और राष्ट्रीय विस्तार-सेवा की योजनाएं हैं। हिन्दुस्तान के देहाती इलाकों में इनका जितना तेज़ी से और वड़े पैमाने पर विस्तार हुआ है, उसका मुकावला

दुनिया के और किसी काम से नहीं किया जा सकता। सिर्फ तीन साल पहले इनकी शुरूआत हुई। १,२०,००० या इससे कुछ ज्यादा गांवों में वे दाखिल हो गई हैं और अगले छः बरसों में हम उन्हें पांच लाख गांवों में पहुंचा देने की उम्मीद करते हैं। हमारा यह आश्चर्यजनक और महत्वाकांक्षी कार्यक्रम है। इन सभी सामुदायिक परियोजनाओं के लिए प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं की जरूरत है। चोटी पर कुछ अव्वल दर्जे के आदमी हैं, कुछ प्रशिक्षित ओवरसियर और ग्राम-कार्यकर्ता हैं, लेकिन मुद्दे की बात यह है कि हमें प्रशिक्षित आदमियों की जरूरत है। अगला सवाल यह उठता है कि जिस तरह के प्रशिक्षित आदमी हमें चाहिए, क्या हमारे प्रशिक्षण-केन्द्रों, विश्वविद्यालयों वगैरा में वैसे तैयार हो रहे हैं ? यह एक मुश्किल सवाल है।

हम इंजीनियरों, ओवरसियरों, ग्राम-कार्यकर्ताओं, सामुदायिक कार्यकर्ताओं के लिए बहुत-से प्रशिक्षण केन्द्र कायम कर रहे हैं। फिर भी सवाल बना हुआ है। आखिर में, रुपये की कमी से हमारा काम रुकनेवाला नहीं है। प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं की कमी की वजह से ही वह रुक सकता है। अगर एक क्षेत्र में हमारे पास प्रशिक्षित आदमी हुए, लेकिन दूसरे क्षेत्र में उनकी कमी हुई तो काम रुक जायगा। इसलिए लाजमी तौर पर हमारे पास भिन्न-भिन्न श्रेणियों के प्रशिक्षित और अप्रशिक्षित आदमी हैं। नये हिन्दुस्तान को बनाने के बड़े काम में हम सब भागीदार हैं।

मैं देश के एक सिरे से दूसरे सिरे तक घूमता हूं। मैं देखता हूं कि नये कारखाने बन रहे हैं और बड़े-बड़े काम हो रहे हैं, बड़ी-

बड़ी नदी-घाटी योजनाएं बढ़ रही हैं, उनसे बिजली पैदा हो रही है और हमारे खेतों को सिंचाई के लिए पानी मिल रहा है। मैं देहाती क्षेत्रों में सामुदायिक और राष्ट्रीय विस्तार-सेवा-योजनाओं को इतनी तेजी से फैलते हुए देखता हूं कि जिसकी इतिहास में दूसरी मिसाल नहीं मिलती। पेरम्बूर का यह रेल के डिब्बे बनाने का कारखाना या इस तरह के सैकड़ों कारखाने नहीं, बल्कि महज़ सौ सामुदायिक परियोजनाएं देहाती हिन्दुस्तान के स्वरूप को बदल सकती हैं। आ हिन्दुस्तान में, हिन्दुस्तान के दिल में, हिन्दुस्तान के गांवों में यही परिवर्तन आ रहा है और ये गांव हजारों बरसों से हमारे देश की रीढ़ की हड्डी रहे हैं। यह सब देखकर मेरा दिल स्फूर्ति से भर जाता है। मैं देखता हूं कि एक नया हिन्दुस्तान धीमे-धीमे रूप ले रहा है। यह नया हिन्दुस्तान हमारे निर्माण-कार्यों, कारखानों, परियोजनाओं, विकास-योजनाओं में ही नहीं, बल्कि मर्दों, औरतों, बच्चों में और भी अधिक प्रकट हो रहा है, जिन्हें तरह-तरह से अपना विकास करने में मदद दी जा रही है।

मेरे खयाल से हिन्दुस्तान में सामुदायिक परियोजनाओं का जो ठोस और क्रान्तिकारी काम हुआ है, वैसा गये कुछ बरसों में दुनिया के किसी भी देश में नहीं हुआ है। उनसे देहाती हिन्दुस्तान का रूप ही बदल रहा है और अगले पांच या छः बरसों में वे हर गांव को अपने दायरे में ले लेंगी। यह एक बड़ी कोशिश है और उसमें हम तभी कामयाब होंगे जब हम सब उसे अपना काम समझेंगे। हम सबको उसके लिए मिलकर काम

करना होगा। मर्दों और औरतों, यहांतक कि लड़कों और लड़कियों तक को यानी सभीको उसमें हाथ बंटाना होगा।

और किसी देश के मुकाबले हमारे देश में यह खयाल ज्यादा घर किये हुए है कि जो आदमी शरीर-श्रम नहीं करता और मेज पर बैठता है, वह शरीर-श्रम करनेवाले आदमी से ज्यादा बड़ा होता है। मैं आपसे साफ कहना चाहता हूं कि जो इंजीनियर शरीर-श्रम नहीं करता, वह अपने काम के लायक नहीं है, भले ही उसका पद कितना ही बड़ा क्यों न हो। जिस क्षण वह यह मान बैठता है कि शरीर-श्रम करना उसका काम नहीं है और उसका काम केवल दूसरों को हुक्म देना है, वह ठीक तरह अपना कर्त्तव्य पालन करना बन्द कर देता है। मैं हर इन्सान से, ख़ासकर इंजीनियरों से यह अपील करता हूं कि वह अपनी बाहें चढ़ा ले, काम में जुट जाय और दूसरों को बता दे कि काम इस तरह किया जाता है। ब्रिटेन, अमरीका और रूस में इंजीनियर दफ्तर में बैठकर हुक्म जारी नहीं करता। वहां बड़े-से-बड़ा आदमी शरीर-श्रम करता है। वह कमर झुकाता है और काम करता है। मगर हमारी जात-पांत और अंग्रेजों की अफसरी परम्परा की वजह से कई रुकावटें खड़ी हो गई हैं। हमें उन्हें दूर हटाना होगा।

हमने अनेक ग़लतियां की हैं। मैं कहना चाहता हूं, हम बराबर ग़लतियां कर रहे हैं, फिर भी मैं उम्मीद करता हूं हममें इतनी बुद्धि है कि हम अपनी ग़लतियों को जान लेते हैं और उन्हें सुधारने की कोशिश करते हैं।[1]

---

१. मद्रास के भाषण के अंश। २ अक्तूबर १९५५

: १३ :

बड़ा और करने योग्य काम

हमारे यहां अनेक कान्फ्रेंसें होती हैं, जिनमें देश के हर कोने से मंत्री अथवा अफसर हिस्सा लेने आते हैं। कभी-कभी मैंने कहा है कि शायद हम बहुत ज़्यादा कान्फ्रेंसें करते हैं, मगर यह जरूरी है कि जुदा-जुदा राज्यों के लोग अक्सर एक जगह इकट्ठे हों और अपने समान मसलों पर गौर करें। हिंदुस्तान एक बड़ा मुल्क है और उसके मसलों में कुछ समानता और कुछ विविधता भी है और इसलिए यह बड़ी बात है कि इन सब मसलों पर पूरे हिंदुस्तान को निगाह में रखकर विचार किया जाय। हमारा लक्ष्य सारे हिंदुस्तान की बराबर तरक्की करना है और जगह-जगह जो फर्क मौजूद है, उसे हम बढ़ाना नहीं चाहते।

इन कान्फ्रेंसों में सामुदायिक परियोजना और राष्ट्रीय विस्तार-सेवा के विकास-आयुक्तों की कान्फ्रेंस हमारे लिए सबसे ज्यादा ज़रूरी हो गई है। इन योजनाओं का विचार पहले-पहल छोटे रूप में किया गया था, मगर उनका तेजी से विकास हुआ और ये एक तरह की क्रान्तिकारी ताकतें बन गई हैं, जो देहाती हिंदुस्तान की शक्ल बदल देंगी। इससे जाहिर होता है कि उनसे आज की मौजूदा जरूरत पूरी हो रही है। ये हिन्दुस्तान की हालत में ही फर्क नहीं लाई हैं और अपने कार्यक्षेत्र में नई जिन्दगी ही पैदा

नहीं की है, बल्कि उनकी ओर हिन्दुस्तान से बाहर के लोगों का भी बड़े पैमाने पर ध्यान गया है।

सामुदायिक कार्यक्रमों की कामयाबी की एक वजह यह है कि उनकी और कहीं से नकल नहीं की गई है, बल्कि उनका विकास इस देश की धरती में से हुआ है और वे आज की ज़रूरत के मुताबिक हैं। इसलिए वे आदर्शवादी होने के अलावा यथार्थवादी और व्यावहारिक भी हैं।

हमने हिंदुस्तान में समाजवादी ढंग की समाज बनाने का फैसला किया है और दूसरी पंचवर्षीय योजना वह बुनियाद खड़ा करती है, जिसपर हम आनेवाले समय की इमारत को बनायंगे। सामुदायिक विकास कार्यक्रम और राष्ट्रीय विस्तार-सेवा उस बुनियाद के जरूरी हिस्से होंगे। इन सामुदायिक कार्यक्रमों ने बड़ी हद तक देहातों में नई जिंदगी पैदा की है। अब लगातार और गहराई से काम करने का समय है। इस काम का खासतौर पर यह लक्ष्य होना चाहिए : (१) खेती की पैदावार बढ़ाई जाय; और (२) ग्रामोद्योगों का विकास हो और उन्हें ज्यादा-से-ज्यादा उत्पादक सहकारी समितियों के रूप में संगठित किया जाय।

इस बात को हमें हमेशा याद रखना चाहिए कि हमारी ज़मीन की पैदावार बहुत कम है, दुनिया में और किसी भी देश के मुकाबले कम है। हमारी आइंदा तरक्की का सारा दारोमदार इसपर है कि हम इस पैदावार को बढ़ायें और दूसरी पांचसाला योजना में पैदावार के लक्ष्यों को पार कर लें। अगर हमारे ही जैसी हालतवाले दूसरे देश अपनी खेती की पैदावार तेज़ी से बढ़ा सकते हैं तो कोई वजह नहीं कि हम वैसा न कर सकें।

इसके लिए हमें सघन खेती करनी होगी, अच्छे बीज, अच्छे तरीके, खाद वगैरा का इस्तेमाल करना होगा। इसका यह मतलब नहीं कि हम बड़े पैमाने पर मशीनरी का उपयोग करें। इस काम में हमारे ग्राम-सेवकों और दूसरे कार्यकर्ताओं को महत्वपूर्ण भाग लेना चाहिए। हमारे विकास-आयुक्तों को यह महसूस करना चाहिए कि इस बारे में हमारी कामयाबी सामुदायिक विकास योजना की ही नहीं, बड़ी हद तक दूसरी पांचसाला योजना की कामयाबी की भी निशानी होगी।

सामुदायिक कार्यक्रम का लाजमी तौर पर ग्राम-पंचायतों और सहकारी समितियों के साथ पूरा तालमेल होना चाहिए। इन सब मामलों में हमें लोगों की पहल को जगाना चाहिए, ताकि वे सरकारी एजेंसियों के मुकाबले कहीं ज्यादा अपने-आप-पर भरोसा रख सकें।

दूसरी पांचसाला योजना में यह लक्ष्य निर्धारित किया गया है कि सामुदायिक कार्यक्रम सारे देश में फैल जाय। यह बड़ा और करने लायक काम है और उसके लिए हम सबको कड़ी मेहनत करनी होगी। उसके लिए तकनीकी कर्मचारियों को प्रशिक्षण देना होगा। सबसे अधिक उसके लिए हममें श्रद्धा, उत्साह और मिलकर काम करने की क्षमता जरूरी होगी।[1]

---

१. विकास-आयुक्तों की कान्फ्रेंस को संदेश, मई १९५६

: १४ :

कार्यक्रम की नई दिशा

पिछले तीन या चार बरसों में हमने सामुदायिक परि-योजनाओं और राष्ट्रीय विस्तार-सेवा के लिए एक उल्लेखनीय यानी अचरजभरा संगठन बनाया है और यह सामु-दायिक विकास-संगठन है। इस समय मेरे पास पक्के आंकड़े नहीं हैं, लेकिन मोटे तौर में देहाती इलाकों के दस करोड़ आदमी उसके भीतर आगये हैं और यह काफी बड़ा विस्तार है और हर साल इसका ज्यादा-से-ज्यादा फैलाव हो रहा है। यह फैलाव महज दिखावे के लिए नहीं है। आप हजारों गांवों में काम का दिखावा नहीं कर सकते। अगले कुछ बरसों में सारे देहाती हिन्दुस्तान में इस कार्यक्रम का विस्तार हो जायगा।

पहली बात सदन से मैं यह चाहूंगा कि वह इसके रूप को समझे। हमने पहली बार ऐसा संगठन खड़ा किया है, जिसके जरिए उसके भीतर आनेवाले क्षेत्रों में हम चोटी से लेकर किसान तक पहुंच सकते हैं। मेल-जोल बनाये रखनेवाली एजेंसियां कायम हो गई हैं। गये समय में बड़ी मुश्किल यह रही कि हिन्दुस्तान की सरकार और राज्य सरकारें अच्छे-अच्छे फैसले और प्रस्ताव करती थीं, लेकिन वे गरीब किसानों तक कभी पहुंच नहीं पाती थीं।

पहली मरतबा हमने सामुदायिक विकास-संगठन के रूप में एक शानदार संगठन खड़ा किया है। मैं इस समय उसके अबतक के काम का जिक्र नहीं कर रहा हूं। काम काफी अच्छा हुआ है। इस समय १५,००० ग्रामसेवक हैं। हम उन्हें एक साल का प्रशिक्षण देते हैं। कुल मिलाकर ग्रामसेवक और ग्राम-सेविकाएं योग्य, लगनशील, उत्साही तथा कुछ हद तक जानकार और अनुशासनवद्ध हैं। उन्होंने काफी अच्छा काम किया है। सामुदायिक विकास-संगठन खेती के मामलों में दिलचस्पी ले रहा है। यह उसका एक खास काम है। मगर अब हम चाहते हैं कि वह खेती के विकास पर खासतौर से और ज़ोरों से गौर करे और करीब-करीब उसे ही अपना मुख्य काम बनाले। मैं नहीं चाहता कि वह अपने दूसरे कामों से हट जाय। वे भी काफी महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि इन दूसरे कामों की वजह से ही इस संगठन में जान पड़ी है और लोगों में उत्साह पैदा हुआ है। इसलिए दूसरे काम भी महत्वपूर्ण हैं, किन्तु संगठन को खड़ा कर लेने के बाद हम उसे इस दिशा में ले जाना चाहते हैं और ले जा रहे हैं।

हम यह कैसे करेंगे? पहली बात हमें यह करनी है कि केन्द्रीय सामुदायिक परियोजना-संगठन और खाद्य एवं कृषि-मंत्रालय के बीच गहरा तालमेल कायम हो। दूसरे, उसका राज्यों के कृषि-मंत्रालयों के साथ भी गहरा मेल बैठे। गुजरे जमाने में सामुदायिक परियोजना प्रशासन और खाद्य तथा कृषि-मंत्रालय के बीच काफी मात्रा में सहयोग रहा है। किन्तु हम दोनों को और भी पास लाना चाहते हैं, ताकि वे एक तरह विचार कर सकें, काम कर सकें और आगे बढ़ सकें। मैं राज्यों के कृषि-

मंत्रालयों से भी अपील करूंगा कि वे सामुदायिक विकास-संगठन से पूरा-पूरा सहयोग करें और उसकी मदद लें और इस महान संगठन का उपयोग करें। राज्यों में सामुदायिक परियोजनाओं को भारत सरकार या योजना-आयोग नहीं चला रहा है, राज्य ही उन्हें चलाते हैं। मैंने देखा है कि हालांकि राज्यों द्वारा उनका संचालन होता है और अच्छी तरह होता है—मुख्यमंत्री आमतौर पर उनमें दिलचस्पी लेता है, मुख्य विकास अधिकारी एक ऊंचे दर्जे का बड़ा अफसर होता है—लेकिन कुछ राज्यों में, हाल के परिवर्तनों को छोड़ दिया जाय तो सामुदायिक परियोजना में काम करनेवाले अफसरों और कृषि-मंत्रालयों में गहरा तालमेल नहीं है। वे अलग-अलग विभागों में काम करते हैं। हम इस स्थिति को बदलना चाहते हैं। मुझे ज़रा भी शक नहीं कि अगर केन्द्र और राज्यों के कृषि-मंत्रालयों और सामुदायिक परियोजना-प्रशासन में गठबंधन हो जाय तो परिणाम बहुत सन्तोषजनक आ सकेंगे।[१]

१. लोक सभा का भाषण के अंश। १३ सितंबर, १९५९

: १५ :

नया अध्याय

सामुदायिक विकास योजनाएं अपनी जिंदगी के एक नये दौर में दाखिल हुई हैं। हिन्दुस्तान की सरकार का एक नया मंत्रालय उनकी देखरेख करता है और उनके ही आधार पर उसका नाम रखा गया है। शायद यह पहली मिसाल है कि किसी देश ने सामुदायिक विकास के लिए खास मंत्रालय कायम किया है। इससे न सिर्फ सामुदायिक परियोजनाओं और राष्ट्रीय विस्तार-सेवा-कार्य के विकास का पता चलता है, बल्कि यह इस बात को भी बताता है कि उसे कितना महत्व दिया जा रहा है।

सामुदायिक विकास-योजनाओं का मकसद हमारे देश के आम लोगों को आशा का संदेश देना है, उनमें आत्म-निर्भरता और आत्म-विश्वास की भावना पैदा करना है और अपने मकसदों को कड़ी और मिली-जुली कोशिश से हासिल करने का तरीका सिखाना है।

देहाती हिन्दुस्तान की इस दिलचस्प कहानी में एक नया अध्याय शुरू हुआ है, हमारे खुले खेतों और असंख्य गांवों में एक नया नाटक खेला जा रहा है। इस नाटक में अभिनय करनेवाले हमारे हजारों ग्राम-कार्यकर्ता और संगठक वगैरा हैं। दरअसल अभिनेताओं में हर मर्द और औरत यहांतक कि हर बच्चे को

शामिल होना चाहिए। हरेक को भारत को बनाने के इस महान अभिनय में हिस्सा लेने का गर्व अनुभव होना चाहिए। यह ऐसा महान प्रयास है, जो उनके जीवन को ऊंचा उठा सकता है। विकास करने के लिए भारी मेहनत करनी होती है। बड़े मकसदों के साथ अपनेको जोड़कर ही हम कुछ बड़प्पन पा सकते हैं।[१]

---

१. सामुदायिक विकास-कार्यक्रम की चौथी वर्षगांठ पर संदेश। २ अक्तूबर, १९५६

: १६ :

सही तरीका

मैंने सामुदायिक विकास योजनाओं की अक्सर चर्चा की है और उनपर बहुत ज्यादा जोर दिया है। मैंने अक्सर कहा है कि हिन्दुस्तान के मौजूदा कामों में वे सबसे ज्यादा क्रान्तिकारी हैं और मैं यह सच्चाई के साथ मानता हूं। हमने जबसे उनकी शुरूआत की, तबसे यह महसूस किया है कि उनमें देहाती हिन्दुस्तान में बुनियादी क्रान्ति करने के बीज मौजूद हैं। समय बीतने के साथ मेरे विश्वास में कोई तब्दीली नहीं हुई है। असल में उसमें बढ़ोतरी ही हुई है। इसलिए इस कार्यक्रम के बचाव में या उसकी प्रशंसा में कुछ भी कहना मुझे जरूरी नहीं लगता। मैं उसे बहुत अधिक महत्व देता हूं।

मेरे खयाल में यह अच्छी बात है कि ठीक इस कान्फ्रेंस के अवसर पर मूल्यांकन संगठन का प्रतिवेदन (इवेल्यूएशन आरगे-नाइजेशन्स रिपोर्ट) प्रकाशित हुआ है और अचानक इस रिपोर्ट के आधार पर समाचार-पत्र सामुदायिक विकास-योजनाओं के बारे में कुछ-न-कुछ कहने के लिए प्रेरित हुए हैं। स्वभावतः उन्होंने रिपोर्ट में कार्यक्रम की जो आलोचना की गई है, उसपर जोर दिया है और उन्होंने ठीक ही किया है। उन्होंने महसूस किया है कि इस काम में हमें अपने दावों के अनुसार सफलता नहीं मिली है।

यह सच हो सकता है। जहांतक हमारा ताल्लुक है, मेरे खयाल से हममें इस कार्यक्रम और इस काम के बारे में एक तरह की मिशनरी भावना होनी चाहिए, लेकिन यह कहीं ज्यादा महत्वपूर्ण है कि हम उन गलतियों पर जोर दें, जो हमारे हाथों हुई हैं या उन कामों का विचार करें, जो हमें वास्तव में करने चाहिए थे, किन्तु जिन्हें हम नहीं कर पाये। दरअसल, प्रधान मंत्री के संदेशों या ऐसी दूसरी बातों की बजाय ऐसे मूल्यांकनों के फलस्वरूप हम अपनी प्रगति की सफलता को ज्यादा अच्छी तरह नाप सकेंगे।

मैं नहीं जानता कि मुझे आपसे क्या कहना चाहिए। सामुदायिक विकास-कार्य के जुदा-जुदा पहलुओं पर विचार करने के लिए, मैं समझता हूं, आपने २० कमेटियां बनाई हैं और अनेक मुद्दे सामने आये हैं। मैंने उनमें से कुछको सुना है। मैं चाहता हूं कि मैं दूसरी चर्चाओं में भी शामिल रह पाता। मैं यह महसूस करता हूं कि हमें देहाती हिन्दुस्तान में सफल होना चाहिए और यह अत्यन्त महत्वपूर्ण बात है। मैं यह कहूंगा कि हालांकि हम देश में भारी उद्योग वग़ैरा कायम करने की कोशिश कर रहे हैं, जो बहुत महत्वपूर्ण और जरूरी हैं, लेकिन जबतक हम बड़े देहाती समाज के बीच नहीं जायंगे और उसे काम करने पर आमादा नहीं करेंगे तबतक हम लोगों के रहन-सहन का स्तर ऊंचा नहीं उठा सकेंगे और आगे नहीं बढ़ सकेंगे। कारखाने वगैरा जरूरी हैं, किन्तु देहातों में खेती से ताल्लुक रखनेवाले कामों के जरिए ही हमारे ज्यादातर साधन पैदा होते हैं।

गये साल, मुझे याद है, कनाडा के प्रधान मंत्री ने मुझसे कहा था कि लोग यह महसूस नहीं करते कि मुख्य साधन कहां से आते

है। कनाडा एक अत्यंत औद्योगिक देश है और शायद आपको मालूम है कि उस देश में काफी ज्यादा खुशहाली हुई है। उस देश में बड़ी मात्रा में तेल वगैरा का पता चला है और उसने बहुत धन कमाया है। लेकिन कनाडा के प्रधान मंत्री ने मुझे बताया कि इन सब चीजों और बड़े उद्योगों से केवल उतना ही मिला है, जितना एक प्रान्त ने कृषि से दिया। उस प्रान्त का नाम अल्बर्टा है और उसने गेहूं की शक्ल में कनाडा के सब उद्योगों के जरिये पैदा की गई दौलत के मुकाबले ज्यादा दौलत पैदा की है। अगर कनाडा का यह हाल है तो आप हिन्दुस्तान में खेती की पैदावार का महत्व अच्छी तरह समझ सकते हैं।

कान्फ्रेंस के अध्यक्ष ने अपने शुरू के भाषण में हिन्दुस्तान में खेती की पैदावार बढ़ाने के महत्व पर जोर दिया है। यह जरूरी है, क्योंकि खेती की पैदावार में थोड़ी-सी बढ़ोतरी से भी हम विदेशी या देशी कर्जों और अनुदानों के मुकाबले ज्यादा साधन हासिल कर सकते हैं। दूसरा महत्वपूर्ण पहलू यह है कि राजनैतिक चेतना पर आधारित देश का लोकतंत्री ढांचा हमसे सुधार का तकाजा करता है। हम इंतजार नहीं कर सकते और न देहातों को ही तबतक इंतजार करते रहने के लिए कह सकते हैं, जबतक हम कुछ करके उनके पास दुबारा न जायं, क्योंकि आखिर में गांवों के लोग ही संसद और राज्यों की विधान-सभाओं के अधिकतर सदस्यों का चुनाव करते हैं। वे सरकारों को बना और बिगाड़ सकते हैं।

खेती की पैदावार में कैसे बढ़ोतरी की जा सकती है? सुधरे हुए तरीकों की शिक्षा बेशक जरूरी है, लेकिन इससे भी कहीं

ज्यादा जरूरी यह है कि ठीक तरीके से लोगों के पास पहुंचा जाय, उनमें जोश की नई भावना पैदा की जाय, काम करने का जोश पैदा किया जाय। मुझे याद है कि किस तरह कुछ समय पहले गांधीजी ने सारे राष्ट्र में नई आशा और चाह की बिजली दौड़ा दी थी। वह असाधारण व्यक्ति थे और हम उनकी बराबरी नहीं कर सकते। फिर भी हम उनसे कुछ-न-कुछ सीख सकते हैं। हमें बड़प्पन की भावना को छोड़ देना चाहिए और हमें ग्रामीणों के साथ एकरूप होना चाहिए। हमारी पोशाक उनसे मिलती-जुलती हो, हम उनकी अपनी भाषा में उनसे बातचीत करें, उनके साथ खाना खायें और जमीन पर उनके साथ बैठें। अफसरी तौर-तरीके का कड़ाई से पालन करना गांववालों और हमारे बीच चौड़ी खाई पैदा कर देता है और उसका कोई नतीजा नहीं निकलता।

नौकरशाही की बुराइयों के बारे में बहुत-कुछ कहा जाता है। मगर कोई भी तरीका, चाहे वह समाजवादी, साम्यवादी या लोकहितकारी राज्य का तरीका हो, नौकरशाही को जन्म देगा ही। आखिर सरकारों को बहुत सारे लोग मिलकर चलाते हैं। जरूरी यह है कि नौकरशाहों और लोगों के बीच की खाई को, जहांतक मुमकिन हो, कम किया जाय। सामुदायिक विकास संगठन में काम करनेवालों के लिए यह और भी जरूरी है। आप अपने सरकारी स्वरूप को अलग रख दें और लोगों का विश्वास हासिल करें। हमने लोगों में बड़ी-बड़ी आशाएं जगा दी हैं, लेकिन हमें मालूम है कि हमारे सामने जो काम है, वह ऐसा है कि जिसे लम्बे समय तक पूरा नहीं किया जा सकता। आप चार

साल में, पांच साल या दस साल में भी सारे हिन्दुस्तान को नहीं बदल सकते और उसमें कुछ नयापन नहीं ला सकते। मगर मेरे खयाल से हम, बहुत लोग जितना सोचते हैं उसके मुकाबले, तेजी से रद्दोबदल ला सकते हैं। एक बार आप अगर लोगों को निठल्लेपन की लीक से बाहर ले आने में कामयाब हो जाते हैं, तो फिर उनकी रफ्तार तेज हो जायगी। आपका मकसद यह होना चाहिए कि आप लोगों को हाथ पकड़कर बाहर खींच लें और सही रास्ते पर डाल दें और उसपर उनकी ताकत के मुताबिक तेजी से चला दें।

हमने सहकारिता की चर्चा की है। यह केवल आर्थिक सवाल नहीं है, बल्कि एक बुनियादी सवाल है। अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में यह बहुत ज्यादा जरूरी हो गया है कि मुल्क शान्तिपूर्वक साथ-साथ रहें, एक दूसरे को बर्दाश्त करें, वरना खतरा है कि सारी दुनिया तबाह हो जायगी। कोई बीच का रास्ता नहीं है। विज्ञान और तकनीकी जानकारी ने मानवता का जो विकास किया है उसके फलस्वरूप लोग एक-दूसरे के कामों के इतने पास आगये हैं कि या तो उन्हें सहयोग करना चाहिए या लड़ना-झगड़ना चाहिए। अगर अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र के लिए यह बात सही है तो जाहिर है कि राष्ट्रीय क्षेत्र में और भी अधिक सही होनी चाहिए। दूसरे देशों में, अधिक विकसित देशों में, लोग आपस में सहयोग करते हैं। हिन्दुस्तान में राजनैतिक एकता के बावजूद हममें वह दिली एकता नहीं पनपी है। मुझे ज़रा भी शक नहीं है कि जहांतक खेती का ताल्लुक है, जबतक आप बड़े फार्म कायम नहीं करते, भविष्य में होनेवाली तकनीकी प्रगतियों का लाभ नहीं उठा सकेंगे। हम

बड़े फार्म नहीं चाहते। हमें बड़े जमींदारों की जरूरत नहीं। लेकिन हम चाहते हैं कि सहकारी आधार पर छोटे किसान इकट्ठे हो जायं और मिलकर काम करें और खेती की वैज्ञानिक प्रगति का लाभ उठायें। वे अपने निजीपन को भी कायम रख सकते हैं, इसलिए मुझे कोई शक नहीं है कि सहकारी खेती ही काम का एक तरीका होगा। लेकिन, जैसा मैंने कहा, हमें सहकारी खेती थोपनी नहीं है और न हम उसे थोप सकते हैं। मैं सहकारी खेती और सामूहिक खेती में बहुत निश्चित और बहुत साफ फर्क करता हूं। उनमें मात्रा के अलावा गुण की दृष्टि से भी बड़ा अन्तर है। मैं खुद सामूहिक खेती के तरीके को पसंद नहीं करता, क्योंकि मैं चाहता हूं कि व्यक्ति उसके धंधे में शामिल दूसरे भागीदार के साथ गहरे संबंध की भावना अनुभव करे। किन्तु इस सबका हमें फैसला नहीं करना है। हम काम को होने दें और देखें कि क्या नतीजा होता है, लेकिन मैं महसूस करता हूं कि हम यह आदर्श रखें और उसके बारे में लोगों को बतायें, लोग उसे समझें और मुमकिन हो तो उसपर अमल करें। सहकारी ढंग पर काम करने की यह पहली बात है। आप जरूर इसी तरीके को अपनायें, लेकिन अगर आप इस विचार को लोगों के सामने बराबर नहीं रखेंगे, उन्हें शिक्षण नहीं देंगे, उसके बारे में सोचने को उकसायंगे नहीं तो उन्हें बदलना मुश्किल होगा और आप जो लक्ष्य हासिल करना चाहते हैं, उसमें देर लगेगी। मगर याद रखिये, मैं यह केवल उत्पादन बढ़ाने और उसमें विज्ञान का प्रयोग करने के लिए ही नहीं चाहता, बल्कि मैं सहकारी ढंगसे सोचने और मिलकर काम करने की आदत का विकास चाहता

हूं। निजी तौर पर किसान खूब अच्छा आदमी होता है, चाहे वह छोटा हो या बड़ा, वह बहुत ज्यादा अपने आपमें बंधा हुआ होता है और आनेवाले समय में वह ऐसा नहीं रह सकता, कारण विज्ञान ने बहुत तरक्की करली है। अगर वह अपने खुद के दायरे से बाहर निकलकर नहीं सोचेगा तो आगे उसे कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा। इसलिए व्यावहारिक परिणामों के अलावा मनोवैज्ञानिक और दूसरे कारणों से भी मैं इस नतीजे पर पहुंचा हूं कि हमें इस दिशा में आगे बढ़ना चाहिए।

भूदान और ग्रामदान आदि के बारे में भी कुछ चर्चा हुई। जाहिर है कि कोई भी सरकार लोगों से अपनी भूमि देने की मांग करते हुए नहीं घूमेगी। यह सरकार की नीति नहीं हो सकती। आपकी नीति की यह बुनियाद नहीं हो सकती कि लोग सारे देश में अपनी भूमि दे दें और अगर सारे देश में ऐसा नहीं हो सकता तो आप कुछ लोगों को चुनकर उन्हें भूमि देने के लिए नहीं कह सकते, लेकिन मुझे कोई शक नहीं है कि आचार्य विनोबा के आन्दोलन का भारी महत्व है, उसकी दिखाई देनेवाली कामयाबियों के लिए ही नहीं, बल्कि उस दिमागी तब्दीली के लिए भी, जो वह जमीन और उसकी मालकियत के बारे में पैदा कर रहा है। ज़मीन की निजी मालकियत के बारे में जो तीव्र भावना है, उसे वह कुछ कमजोर करता है और यह अच्छी बात है। इसलिए मैं खुद और कुछ दूसरे लोग उसका स्वागत करते हैं और अपनी सहानुभूति से उसे बढ़ावा देते हैं। प्रधानमंत्री की हैसियत से मेरे लिए यह अजीब बात होगी कि मैं लोगों से भूदान की मांग करूं। जो हालत है, उसमें सरकार ऐसा नहीं कर सकती,

लेकिन विनोबाजी का आन्दोलन बुनियादी तौर पर सही दिशा में है, उसकी कामयाबी की दृष्टि से और जो सुखद वातावरण वह पैदा करता है, उस दृष्टि से भी। विनोबा जी का जो आदर्श है वह मेरा भी आदर्श है। मैं इस आन्दोलन का स्वागत करता हूं। मेरे खयाल से गांव की जमीन पर गांव की सम्मिलित मालकियत होनी चाहिए और उसपर सहकारी खेती को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। मैं मानता हूं कि सामुदायिक विकास आन्दोलन को, विनोबाजी के ग्रामदान या भूदान-आन्दोलन को, जहांतक मुमकिन हो, सहयोग देना चाहिए। इसके रास्ते में बहुत-सी कठिनाइयां हो सकती हैं, जैसाकि किसीने जिक्र किया है, लेकिन अगर उनपर खुले तौर से सोचा जाय तो ज्यादातर कठिनाइयां दूर हो जायंगी। हमारा तरीका दोस्ताना और सहयोग का होना चाहिए, हमें समझने की कोशिश करनी चाहिए और जो बात हम नहीं कर सकते, उसके बारे में हमें अपनी सफाई देनी चाहिए। हम जिस स्थिति में हैं, उसमें हम कुछ बातें नहीं कर सकते। आखिर आप सब सरकार के नुमाइंदे हैं और जहांतक मुमकिन है, सहयोग का रास्ता खोजने की कोशिश कर रहे हैं। सरकार के सहयोग के बिना, मैं नहीं समझता कि भूदान-आन्दोलन जमीन का क्या कर सकता है। दरअसल, उसे सहयोग मिल रहा है। राज्य विधान सभाओं ने कानून बनाये हैं और इस तरह ये ग्रामदानी गांव एक मानी में सरकार के अंग होंगे।

अगर मैं साफ तौर पर कहूं तो आज जो हिन्दुस्तान का गांव है, उसे मैं दरअसल पसंद नहीं करता। मैं उसे बिल्कुल बदलना चाहता हूं, बेशक धीरे-धीरे, लेकिन पूरी तरह। मेरी समझ में

नहीं आता कि हम हिन्दुस्तानी गांव के इस तमाम पिछड़ेपन की क्यों तारीफ करते हैं। मैं स्वीकार करता हूं कि गांव का एक किसान एक शहरी आदमी से अच्छा होता है। यह बिलकुल सच है, लेकिन वह पिछड़ा हुआ है। हम उसे पिछड़ा क्यों रखें ? मैं चाहता हूं कि गांवों में हर तरह की सहूलियतें दी जायं। मैं नहीं समझता कि हमारे गांव देश के बाकी हिस्से से लम्बे समय तक अलग-थलग रह सकते हैं। हिन्दुस्तान के बदलने के साथ-साथ हर तरह की ताकतें उनपर जबर्दस्त असर डालेंगी। यह स्वागत-योग्य परिवर्तन होगा।

मुझे खुशी है कि सामुदायिक विकास आन्दोलन और केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड के बीच एक तरह का गहरा ताल्लुक कायम किया जा रहा है। जहांतक स्त्रियों और बच्चों का ताल्लुक है, सामुदायिक विकास कार्यकर्ताओं को अलग संगठन कायम नहीं करना चाहिए। उन्हें इस क्षेत्र में समाज कल्याण बोर्ड के काम का फायदा उठाना चाहिए। बोर्ड ने एक बहुत अच्छा काम किया है। बाल-कल्याण के काम में उसने बहुत-सी महिलाओं को लगाया है। यह बहुत खुशी की बात है, क्योंकि मर्दों के मुकाबले औरतें बच्चों पर बहुत ज्यादा असर डालती हैं। मैं चाहता हूं कि इस तरह के काम में ज्यादा देहाती औरतों को लगाया जाय। वे कम पढ़ी-लिखी हो सकती हैं, मगर पढ़ी-लिखी शहरी औरतों के मुकाबले वे ज्यादा अच्छा काम कर सकेंगी, क्योंकि लोगों के साथ उनका ज्यादा गहरा मेल होता है।

अखीर में कुछ शब्द मैं प्रशिक्षण के बारे में कहूंगा। मेरे पास कोई बाकायदा सुझाव नहीं हैं, लेकिन मैं नहीं चाहता कि

प्रशिक्षित आदमियों की कोई अलग जात बन जाय। शायद जो लोग प्रशिक्षित नहीं हैं, पर जिनके पास अच्छे विचार हैं, श्रद्धा, उत्साह और कड़ी मेहनत करने की शक्ति और क्षमता है, वे आपके प्रशिक्षित आदमियों के मुकाबले आपके संदेश को ज्यादा दूर तक फैला सकेंगे। गांधीजी के आन्दोलन के शुरू के दिनों में हमारे पास प्रशिक्षित आदमी नहीं थे, हमारे पास ऐसे मर्द-औरत थे, जिनमें श्रद्धा, भक्ति और जोश था। उन्होंने गांधीजी के संदेश को जंगल की आग की तरह सारे देश में फैला दिया। इसलिए जहां कहीं मुमकिन हो, अप्रशिक्षित आदमियों से काम लेने में संकोच न करें, बशर्ते कि आप समझें कि उनमें कुछ शक्ति और जोश है। आप उनमें जरूरी जोश पैदा करें और वे आपके बाकी काम में बाधा डाले बिना सब दूर घूम जायंगे और आपका संदेश गांव-गांव तक पहुंचा देंगे।[1]

---

१. मसूरी में आयोजित विकास-आयुक्तों की कान्फ्रेंस में दिये गए भाषण के अंश, अप्रैल १९५७

: १७ :

धरती का नमक

सामुदायिक विकास कार्यक्रम अबतक देहाती हिन्दुस्तान के आधे से ज्यादा भाग में फैल चुका है और वह इस तरह फैल रहा है कि वह हमारे सभी गांवों को अपने दायरे में ले लेगा।

मगर मेरे लिए अहम बात यह नहीं है कि इस कार्यक्रम का कितने गांवों में फैलाव हो चुका है। मेरी दिलचस्पी इस बात में है कि जो काम हो रहा है, वह किस किस्म का है और यह कार्यक्रम किस हद तक देहाती लोगों में नई जिंदगी ला रहा है और ज्यादा अच्छे इन्सान तैयार कर रहा है।

इससे ज्यादा अहमियत का काम दूसरा नहीं हो सकता कि हिन्दुस्तान के इन्सानों को तैयार किया जाय। किसान ही युग-युगों से हिन्दुस्तान का बोझ ढोता आ रहा है। किसानों के विकास और तरक्की पर ही हिन्दुस्तान के भविष्य का लाज़मी तौर पर दारोमदार रहेगा। हम आज दो क्षेत्रों की तरक्की पर सबसे ज्यादा जोर दे रहे हैं—एक तो यह कि अनाज की पैदावार बढ़े और दूसरे, कुटीर तथा छोटे उद्योगों का ज्यादा विकास हो। अनाज हमारी योजना का मध्य-बिन्दु है और हमको उसके लिए सघन विकास करना होगा। इस बारे में अबतक हमने बहुत-सी अपीलें की हैं और उनके नतीजे भी निकले हैं।

अब वक्त आ गया है कि जब आम अपीलें काफी नहीं होंगी, बल्कि हर गांव और अक्सर हर परिवार के पास निश्चित और योजनाबद्ध तरीके से पहुंचना होगा, ताकि उनके लिए लक्ष्य बनाये जा सकें और उन्हें पूरा करने की कोशिश की जाय।

हमारे किसानों का क्या भविष्य है? ज्यादातर किसानों के पास मुश्किल से एक या दो एकड़ खेती की जमीन होगी। जमीन के इस छोटे टुकड़े की पैदावार बढ़ाई जा सकती है और बढ़ाई जानी चाहिए और इस तरह किसान की हालत में थोड़ा सुधार किया जा सकता है। लेकिन इसकी एक हद है और जमीन का आकार (छोटापन) वह सीमा तय कर देता है।

हिन्दुस्तान में भूमि पर निर्भर रहनेवाले लोगों की तादाद बहुत ज्यादा है। इसके मानी यह होते हैं कि काफी लोगों को दूसरे कामों और धंधों में लगाना होगा। इनमें कुछ धन्धे पूरे समय के हो सकते हैं और कुछ खेती से जुड़े हुए थोड़े समय के धंधे होंगे। यही हमारे कुटीर और छोटे उद्योगों-सम्बन्धी कार्यक्रम का महत्व है। इसमें शक नहीं कि जब बड़े उद्योगों का विकास होगा तो देहाती क्षेत्र के बहुत-से लोग उनमें काम करने लगेंगे। लेकिन बड़े उद्योगों का विकास कितनी ही तेज रफ्तार से क्यों न हो, वे बेकारी और दूसरे धंधों की मुख्य समस्या को हल नहीं कर सकेंगे। उसे तो कुटीर और छोटे उद्योगों के विकास से ही धीमे-धीमे हल किया जा सकेगा।

इसके बावजूद, जमीन के छोटे टुकड़े का मालिक किसान किस तरह काम करेगा? जबतक वह अपनी ही श्रेणी के किसानों के साथ मिलकर काम नहीं करेगा, वह आधुनिक तक-

नीक या नये तरीकों से उपलब्ध होनेवाली सुविधाओं का लाभ नहीं उठा सकेगा। सहकार उसके भावी विकास की कुंजी है और इस तरह सहकारी आन्दोलन सारे देश में फैलना चाहिए और इस बड़े देश के सभी गांव और किसान उसके दायरे में आ जाने चाहिए।

सहकार किस तरह का हो? कुछ कथित सेवा-सहकारी समितियां हैं, कुछ कर्ज देनेवाली सहकारी समितियां हैं। हमने गुजरे वक्त में खासतौर से कर्ज देनेवाली सहकारी समितियों पर जोर दिया और बेशक वे मददगार साबित हुई, पर वे काफी नहीं हैं। हमें अपने सहकारी आन्दोलन के जरिए कहीं ज्यादा फैले हुए इलाके में काम करना चाहिए। दरअसल सहकारी आन्दोलन, जहांतक मुमकिन हो, ज्यादा-से-ज्यादा शक्लों में किसानों की जिंदगी में दाखिल होना चाहिए और पंचायतों के साथ मिलकर उसे हमारे देहाती ढांचे की खास बुनियाद बन जाना चाहिए। सहकारिता की अगली मंजिल मिली-जुली खेती होगी और उसके बारे में कुछ बहस हुई है। मुझे कोई शक नहीं है कि मिली-जुली खेती, जहां कहीं मुमकिन हो और राजी-खुशी से अपनाई जाय, फायदेमंद होगी। लेकिन यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि मिली-जुली खेती को थोपा नहीं जा सकता और जो उसमें शामिल हों, उनकी राय से ही वह हो सकती है। शुरू में सेवा सहकारी समितियां बनाई जायं और ज्यों-ज्यों वे कामयाब हों, अगला कदम मिली-जुली खेती की शक्ल में उठाया जा सकता है। जहां नई जमीन पर खेती शुरू की जाय, वहां शुरू में ही मिली-जुली खेती की जा सकती है।

मैं छोटी सहकारी समितियों को ज्यादा पसंद करूंगा, जिनमें एक, दो या तीन गांव शामिल हो सकते हैं। मुझे यह जरूरी मालूम देता है कि सहकारी समिति ऊपर से न चलाई जाय। बहुत ज्यादा सरकारी रूप उसका नहीं होना चाहिए, बल्कि वह लोगों की आत्म-निर्भरता और आत्म-विकास की भावना जाहिर करनेवाली होनी चाहिए। दूसरे, उसके सदस्यों में नजदीकी जान-पहचान होनी चाहिए, नहीं तो वह परोक्ष रूप ले लेगी और देहाती उसे अपना संगठन समझना बंद कर देंगे।[1]

---

१. कुरुक्षेत्र के वार्षिक अंक के लिए सन्देश, अक्तूबर, १९५७

: १८ :

देहाती हिन्दुस्तान क ताना-बाना

सामुदायिक विकास क्षेत्रों में हो रहे काम की बहुत आलोचना हुई है। इस आलोचना का काफी हिस्सा मुनासिब हो सकता है, लेकिन खास बात यह है कि हिंन्दुस्तान का सामुदायिक विकास कार्यक्रम अबतक की सबसे ज़्यादा क्रान्तिकारी घटना है और जो नतीजे हासिल हुए हैं, वे सचमुच अचरज में डालनेवाले हैं। हम बहुत-सी जगहों में नाकामयाब हुए हैं और बहुत-सी बातों में जो काम करना चाहते थे, नहीं कर पाये—यह पूरी तरह जानते हुए भी मैंने ऊपरवाली बात कही है। इस कार्यक्रम की शुरूआत हुए साढ़े पांच साल हुए हैं और वह देहाती हिन्दुस्तान का ताना-बाना बन गया है। इसकी वजह यह नहीं है कि उसका लाखों गांवों में फैलाव हुआ है, बल्कि यह है कि जहां पहले जड़ता और मुर्दापन था, वहां नई जिन्दगी पैदा हो गई है और उसे हम लहलहाता हुआ देखते हैं। दरअसल हमने हिन्दुस्तान की गहराई से नई ताकतों को उभारा है और अब सवाल यह है कि हम उन्हें किस तरह सही धाराओं में ले जा सकते हैं।

सामुदायिक विकास के बारे में इस राष्ट्रीय सम्मेलन का काम यह है कि इस कार्यक्रम के बहुत-से पहलुओं पर सोचे और

सही रास्ता दिखाये। आखिर में वे मर्द और औरतें ही हैं, जिन्हें हम सिखा और तैयार कर रहे हैं। हर तरह का नतीजा, सीखे हुए, अपने पैरों पर खड़े और मिलकर काम करनेवाले आदमियों से ही निकलेगा। हमें आदमी तैयार करने हैं और सामुदायिक जीवन की भावना को बढ़ाना है। आपसी मेल-जोल के जरिये ही हमारे लोग पनपेंगे और आगे बढ़ेंगे। मैं सरकार का एक सदस्य हूं और मेरा खयाल है कि सरकार को नये हिन्दुस्तान के बनाने में बड़ा हिस्सा लेना चाहिए, लेकिन मेरा यकीन है कि जिन्दगी की असली ताकत सरकार से नहीं, बल्कि लोगों से ही आयगी।

हमारा लक्ष्य क्या है ? हम हर गांव में एक स्कूल, एक पंचायत और एक बहूद्देशीय सहकारी समिति चाहते हैं।' इस तरह हम अपने राजनैतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विकास की नींव रखते हैं और विशाल भारतीय लोकतन्त्र के भीतर स्व-शासित लोकतन्त्री इकाइयों की रचना करते हैं।

फौरन पूरे किये जानेवाले हमारे लक्ष्य क्या हैं ? खेती की पैदावार में, खासकर अनाज की पैदावार में, हम काफी बढ़ोतरी करना चाहते हैं और ग्रामोद्योगों और छोटे उद्योगों का विकास करना चाहते हैं। खुराक की पैदावार बढ़े, आज यह निहायत जरूरी है। दरअसल यह सबसे बड़ी समस्या है, जिसे हमें हाल ही में हल करना है, और सभी-कुछ इसपर निर्भर करता है। खेती के विकास से ही उद्योग पनपेंगे और खेती की पैदावार बढ़ने से ही ग्राम-जीवन में वे सुविधाएं जुट सकेंगी, जिन्हें हम जुटाना चाहते हैं।

हिन्दुस्तान में सामुदायिक विकास एक नाजुक मंजिल में पहुंच गया है। आइंदा की कामयाबी की नाप-जोख धुंधली कल्पनाओं से नहीं, बल्कि असली पैदावार, खासतौर से अनाज की पैदावार, से होगी। इसलिए हर सामुदायिक विकास-खण्ड को यह बात ध्यान में रखनी चाहिए, ताकि इस कोशिश का ज्यादा-से-ज्यादा निजी स्तर तक फैलाव हो सके।

सामुदायिक आन्दोलन अब धीमे-धीमे लोगों के हाथों में चला जाना चाहिए। सरकार की मदद और भागीदारी जरूरी है और वह जारी रहेगी, पर अब उसे ज्यादा-से-ज्यादा जन-आन्दोलन बन जाना चाहिए—ऐसा आन्दोलन नहीं, जो ऊपर से अफसरों के जरिए चले।

लोगों को जगाने के लिए औरतों को जगाना होगा। अगर एक बार औरत जाग गई तो सारा परिवार चल पड़ेगा, गांव चलेगा और सारा देश आगे बढ़ेगा। औरतों के जरिये बच्चे भी इस काम को करने के लिए आ जायंगे और उन्हें तन्दुरुस्त जिन्दगी और अच्छी शिक्षा के अवसर मिल सकेंगे। इस तरह आज के बच्चों के जरिए हम कल के हिन्दुस्तान को बनायंगे।[1]

---

१. माउण्ट आबू में हुए सामुदायिक विकास-सम्मेलन को सन्देश, मई १९५८

: १९ :

बुनियादी रास्ता

हमें हिन्दुस्तान में बहुत-से गहरे अन्दरूनी मसलों का सामना करना पड़ रहा है। मगर इन अन्दरूनी मसलों पर जब गौर करते हैं तो हमें लाजमी तौर पर व्यापक विचार करना पड़ता है। जबतक हमारा नजरिया कुछ साफ नहीं होता, या कम-से-कम मौजूदा सवालों के बारे में वह साफ नहीं होता, हम उस उलझन से बाहर नहीं निकल सकेंगे, जिसमें दुनिया आज फंसी हुई है।

आज की बुनियादी असलियत यह है कि इन्सानी जिन्दगी में बहुत तेज रफ्तार से तब्दीली आ रही है। मैंने खुद अपनी जिन्दगी में ही आश्चर्यजनक परिवर्तन देखे हैं और मेरा यकीन है कि अगली पीढ़ी की जिन्दगी में और भी बड़े हेरफेर होंगे, बशर्ते कि एटमी लड़ाई इंसानियत को कुचल और मिटा न दे।

इंसानी दिमाग की जो एक के बाद एक जीत हो रही है, उससे बढ़कर बताने लायक असलियत और क्या हो सकती है और यह चीज तेज रफ्तार से आ रही है। इंसान को आज कम-से-कम एक बड़ी हद तक बाहरी हालतों का शिकार होने की जरूरत नहीं रही। लेकिन एक ओर बाहरी हालात पर जीत हासिल की जा रही है और दूसरी ओर यह अजीब हालात

भी देखने को मिल रही है कि कुल मिलाकर इन्सान में नैतिक शक्ति और आत्मसंयम की कमी है। भौतिक जगत को जीतने के साथ वह अपने को नहीं जीत पा रहा है। विज्ञान इतनी तरक्की कर रहा है कि ज्यादातर इन्सानी कौम उसका खयाल भी नहीं कर सकती और ऐसी समस्याएं पैदा कर रहा है, जिन्हें हममें से ज्यादातर लोग हल करना तो दूर, समझ भी नहीं सकते। मौजूदा जमाने की अन्दरूनी टकराहट और उथल-पुथल की यही वजह है। एक ओर विज्ञान और तकनीक शास्त्र की बड़ी और चकाचौंध कर देनेवाली तरक्की और उसके बहुत सारे नतीजे हैं और दूसरी ओर खुद सभ्यता कुछ दिमागी थकान महसूस कर रही है।

धर्म की बुद्धिवाद के साथ टकराहट होती है। धर्म के अनुशासन और सामाजिक परम्पराओं का लोप हो रहा है और उनकी जगह दूसरे नैतिक या आध्यात्मिक अनुशासनों का जन्म नहीं हो रहा है। धर्म का आज जो अमली रूप है वह ऐसे विषयों से ताल्लुक रखता है, जिनका हमारी आम जिन्दगी के साथ मुश्किल से कोई संबंध होता है और इस तरह वह इस दुनिया से परे का रूप ले रहा है या उसका ऐसी सामाजिक परम्पराओं के साथ नाता है, जिनका मौजूदा जमाने के साथ मेल नहीं बैठता। दूसरी ओर बुद्धिवाद अपनी सारी खूबियों के बावजूद अन्दरूनी तल को न छूकर किसी तरह चीजों की सतह को ही छूता दिखाई देता है। विज्ञान खुद उस मंजिल पर पहुंच गया है जब नई सम्भावनाएं और रहस्य क्षितिज पर झांक रहे हैं।

पुराने ज़माने में जिन्दगी सादा और कुदरत के ज्यादा नज-दीक थी। अब वह ज्यादा-से-ज्यादा पेचीदा और तेज रफ्तार-वाली हो रही है और सोचने-विचारने या सवाल करने की गुंजाइश नहीं रही है। यह पुराना सवाल आज भी हमारे सामने है जैसाकि अरसे से इन्सानियत के सामने रहा है। जिन्दगी के मानी क्या हैं ? श्रद्धा का पुराना जमाना अगर आज के सवालों का जवाब नहीं दे सकता तो काफ़ी मालूम नहीं होता। बदलती हुई दुनिया में जिन्दगी इन तब्दीलियों और घटनाओं के साथ लगातार मेल बैठना चाहिए। उसका न होना ही संघर्ष पैदा करता है।

जाहिर है कि पुरानी सभ्यताएं अपनी तमाम खूबियों के बावजूद व्यर्थ साबित हुई हैं। नई पश्चिमी सभ्यता भी अपनी तमाम कामयाबियों और उपलब्धियों तथा अणुबमों के बावजूद नाकाफी दिखाई देती है और इसलिए यह खयाल पनप रहा है कि हमारी सभ्यता में ही कुछ खराबी है। दरअसल, बुनियादी तौरपर हमारी समस्याएं खुद सभ्यता की समस्याएं हैं। धर्म ने कुछ नैतिक और आध्यात्मिक अनुशासन दिया तो उसने अन्धविश्वास और सामाजिक रूढ़ियों को भी जिन्दा रखने की कोशिश की। वास्तव में उन अन्धविश्वासों और सामाजिक रूढ़ियों ने धर्म की वास्तविक भावना को ढंक लिया और पछाड़ दिया। उससे लोगों को निराशा हुई। इस निराशा के पीछे साम्यवाद आता है और एक प्रकार की श्रद्धा और अनुशासन देता है। कुछ हद तक वह खाली जगह को भरता है। वह मनुष्य के जीवन को एक मकसद देकर कुछ अंश में सफल

होता है। किन्तु अपनी जाहिर कामयाबी के बावजूद वह नाकामयाब होता है, कुछ तो अपनी कट्टरता की वजह से और इससे भी ज्यादा इसलिए कि वह इन्सानी जिन्दगी की कुछ लाजमी जरूरतों को नजरअंदाज करता है। साम्यवाद में पूंजीवादी समाज की बेमेल बातों की बड़ी चर्चा है और उसके इस विश्लेषण में सचाई है। किन्तु हम खुद साम्यवाद के कठोर ढांचे में बढ़ रही बेमेल बातें देख रहे हैं। वह व्यक्तिगत आजादी का दमन करता है और इस दमन की जोरदार प्रतिक्रिया होती है। वह जीवन के कथित नैतिक और आध्यात्मिक पक्ष को तिरस्कार की नजर से देखता है और इस तरह न केवल इन्सान बुनियादी तत्व को नजरअंदाज करता है, बल्कि मानव-आचरण को मानदण्डों और मूल्यों से भी दूर कर देता है। उसका हिंसा के साथ जो दुर्भाग्यपूर्ण रिश्ता है, वह मनुष्यों में एक बुरी मनोवृत्ति को बढ़ावा देता है।

मैं रूस की अनेक सफलताओं की बहुत सराहना करता हूं। इन भारी सफलताओं में एक यह है कि रूस में बच्चे को और आम आदमी को गैर-मामूली अहमियत दी जाती है। रूस की शिक्षा और स्वास्थ्य-रक्षा की प्रणालियां शायद दुनिया में सबसे अच्छी हैं। पर यह कहा जाता है और सही कहा जाता है कि रूस में व्यक्तिगत आजादी का दमन होता है। लेकिन हर तरह की शिक्षा का प्रसार खुद जबर्दस्त बंधन से छुटकारा दिलानेवाली चीज है, जो आखिर में आजादी के दमन को सहन नहीं करेगी। यह एक दूसरी विसंगति है। दुर्भाग्य से साम्यवाद हिंसा की जरूरत में बहुत ज्यादा विश्वास प्रकट करता है और इसलिए उसने

दुनिया के सामने जो विचार पेश किया, वह बिगड़ गया। साधनों ने साध्य को बिगाड़ दिया। बुरे साधनों और तरीकों का कैसा जबर्दस्त असर होता है, यह हम इस मिसाल में देख रहे हैं।

साम्यवाद का आरोप है कि पूंजीवादी समाज-व्यवस्था हिंसा और वर्ग-संघर्ष पर टिकी हुई है। मेरे खयाल से यह कथन बुनियादी तौर पर सही है, हालांकि खुद पूंजीवादी व्यवस्था में लोकतंत्री और अन्य संघर्षों और असमानताओं के कारण तब्दीली आई है और लगातार आ रही है। सवाल यह है कि उससे कैसे छुटकारा मिले और वर्गहीन समाज की स्थापना हो, जिसमें सबको समान अवसर मिले। क्या यह लक्ष्य हिंसात्मक तरीकों से हासिल किया जाय या शान्तिमय तरीकों से हासिल किया जा सकता है? साम्यवाद निश्चित रूप से हिंसात्मक तरीके में विश्वास करता है। उसका विचार हिंसात्मक है और वह समझा-बुझाकर या शन्तिमय लोकतंत्री दबाव डालकर परिवर्तन नहीं लाना चाहता, बल्कि दबाव से और दरअसल विनाश और तोड़-फोड़ के जरिये क्रान्ति करना चाहता है। फासिस्टवाद में हिंसा और उन्मूलन के ये सब बुरे पहलू हैं और साथ ही उसके पास कोई मानने लायक आदर्श भी नहीं है।

यह गांधीजी के शान्तिमय तरीके से कतई उल्टा है। साम्यवादी और गैर-साम्यवादी यह सोचते मालूम होते हैं कि हिंसा की भाषा का प्रयोग करके ही किसी उसूल की मजबूती से हिफाजत की जा सकती है और जो उस उसूल को न मानें,

उनकी बुराई ही की जानी चाहिए। दोनों के निकट या तो सफेद है या काला। यह वही पुराना तरीका है, जिसपर कट्टरता से कुछ धर्म चलते थे। यह सहिष्णुता का तरीका नहीं है, जो यह सोचता है कि शायद दूसरे पक्ष में भी सचाई का कुछ अंश हो सकता है। मेरी अपनी राय यह है कि यह तरीका बिल्कुल अवैज्ञानिक, अयुक्तियुक्त और असभ्य है, चाहे वह धर्म के क्षेत्र में या आर्थिक सिद्धान्त या और किसी क्षेत्र में लागू किया जाय। मैं पुराने मूर्तिपूजकों की सहिष्णुता का तरीका पसंद करता हूं, उसके धार्मिक पहलुओं को छोड़कर। हम उसके बारे में कुछ भी सोचें, आज की दुनिया में हम ऐसी मंजिल पर पहुंच चुके हैं कि जन-समाज के बड़े भाग पर विचारों को जबर्दस्ती थोपने की कोशिश आखिर में नाकामयाब होगी। मौजूदा हालत में उसका नतीजा होगा लड़ाई और भयानक बरबादी। जीत किसीको नहीं मिलेगी और हरेक को हार ही नसीब होगी।

इस तरह हिंसा से कोई बड़ा मसला हल नहीं हो सकता, क्योंकि हिंसा बहुत अधिक भयंकर और बरबादी लानेवाली हो गई है। इस सवाल को हल करने का नैतिक उपाय अमली पहलू की वजह से भी कहीं ज्यादा अधिक मजबूत हो गया।

यदि हमारी कल्पना का समाज व्यापक हिंसा के जरिये कायम नहीं हो सकता तो क्या थोड़ी हिंसा से वैसा हो सकता है? निश्चय ही नहीं, कुछ तो इसलिए कि छोटी हिंसा बड़ी हिंसा को जन्म देगी और कुछ इसलिए कि उससे संघर्ष और तोड़फोड़ का वातावरण पैदा होता है। यह समझना दा बात होगी कि टकराहट में प्रगतिशील सामाजिक ताकतों की

ही जीत होती है। जर्मनी में हिटलर ने कम्यूनिस्ट पार्टी और सोशल डेमोक्रेटिक पार्टी दोनों को उठाकर फेंक दिया। ऐसा ही अन्य देशों में भी हो सकता है। हिंदुस्तान में हिंसा को अपनाने की अपील उसमें मौजूद अराजक तत्व की वजह से खास तौर पर खतरनाक होगी। हमारे यहां इतने ज्यादा तोड़ने-फोड़ने वाले तत्व हैं कि हम कोई जोखम नहीं उठा सकते। लेकिन ये सब मामूली वजह हैं। मेरे खयाल से बुनियादी बात यह है कि गलत साधनों से सही नतीजे नहीं निकलेंगे और यह अब केवल नैतिक उसूल नहीं है, बल्कि व्यावहारिक विचार है।

हममें से कुछ इस सामान्य पृष्ठभूमि पर और खासकर हिन्दुस्तान की हालत को ध्यान में रखकर विचार कर रहे थे। यह अक्सर कहा जाता है कि हिन्दुस्तान में निराशा और निरुत्साह की भावना फैली हुई है और पुरानी आशा-वादी भावना कहीं दिखाई नहीं देती, जबकि जोश और कड़ी मेहनत की सबसे ज्यादा जरूरत है। यह हालत सिर्फ हमारे देश की ही नहीं है। सारी दुनिया का यही हाल है। एक पुराने और आदरणीय साथी ने कहा कि इसका कारण हमारे पास जिन्दगी के लिए नज़रिये की कमी है और दरअसल दुनिया भी जिन्दगी के सही नज़रिये के न होने से दुखी है। देश को भौतिक दृष्टि से खुशहाल बनाने की हमारी कोशिश में हमने इन्सानी आदत के आध्यात्मिक तत्व की ओर कोई ध्यान नहीं दिया है। इसलिए व्यक्ति और राष्ट्र को एक लक्ष्य प्रदान करने के लिए, जिसके लिए वह जिन्दा रह सके और जरूरत पड़ने पर मर भी सके, हमको जिन्दगी का कोई नजरिया देना होगा,

हमारी विचारधारा को व्यापक अर्थों में आध्यात्मिक पृष्ठभूमि देनी होगी। हम लोकहितकारी राज्य, लोकतंत्र और समाजवाद की चर्चा करते हैं। ये अच्छे विचार हैं, पर उनसे साफ और स्पष्ट अर्थ मुश्किल से ही जाहिर होता है। सवाल पैदा होता है कि हमारी आखिरी मंजिल क्या होनी चाहिए? लोकतंत्र और समाजवाद किसी साध्य के साधन ही हैं, खुद साध्य नहीं हैं।

हम समाज की भलाई की बात करते हैं। यह मान लिया गया है कि व्यक्ति का बलिदान न किया जाय और असल में सच्ची सामाजिक प्रगति तभी होगी जब व्यक्ति को विकास करने का अवसर दिया जायगा, बशर्ते कि वह चुने हुए वर्ग का न हो, बल्कि सारे समाज में से हो। इसलिए कसौटी यह होनी चाहिए कि कोई भी सामाजिक या राजनैतिक विचार व्यक्ति को अपनी तुच्छ खुदगर्जी से ऊँचा उठने और इस तरह सबकी भलाई के नजरिये से सोचने की कितनी ताकत देता है। जिंदगी का कानून होड़ और खुदगर्जी को पूरा करना नहीं, सहकार और सबकी भलाई में हरेक की भलाई होना चाहिए। ऐसे समाज में फर्ज पर जोर दिया जायगा, अधिकारों पर नहीं। कर्त्तव्यों के पालन से अधिकार अपने-आप मिलेंगे। हमें शिक्षा को नई दिशा देनी होगी और नई किस्म की इन्सानियत का विकास करना होगा।

यह तर्क हमें पुरानी वेदान्ती कल्पना तक ले जाता है कि हरेक पदार्थ, चाहे चेतन हो या अचेतन, एक सम्पूर्ण तत्व का अंग है। हरेक में वह दैवी प्रेरणा अथवा मौलिक शक्ति या जीवन-शक्ति है, जो विश्व में समाई हुई है। यह कल्पना हमें तात्विक

जगत में पहुंचा देती है और हमारी जीवन की समस्याओं से हमें दूर ले जाती है। मेरा खयाल है कि अगर काफी पढ़ा-समझा जाय तो कोई भी विचारधारा कुछ हद तक हमें तत्व-दर्शन की ओर ले जाती है। आज विज्ञान भी करीब-करीब हर तरह की सम्भावनाओं के दरवाजे पर खड़ा है। मैं इन तात्विक पहलुओं की चर्चा नहीं करना चाहता, लेकिन यह तर्क ही संकेत करता है कि किस तरह हमारा मन इस भौतिक जगत में समाये हुए किसी बुनियादी तत्व की खोज करता है। यदि हम सचमुच जीवन-सिद्धान्त की इस सर्वव्यापी कल्पना को मान लें तो उससे नस्ल, जाति या वर्ग की हमारी तंगदिली कुछ कम होगी और जिन्दगी के मसलों के प्रति हम ज्यादा बर्दाश्त करनेवाले और समझदार हो सकेंगे।

हिन्दुस्तान में हम लोकहितकारी राज्य और समाजवाद की बात करते हैं। एक मानी में हरेक देश, चाहे वह पूंजीवादी, समाजवादी या साम्यवादी कुछ ही क्यों न हो, लोकहितकारी राज्य के आदर्श को माना करता है। पूंजीवाद ने कम-से-कम कुछ देशों में यह सामुदायिक कल्याण बड़ी हद तक सिद्ध कर लिया है, हालांकि वह अपनी समस्याओं को हल नहीं कर पाया है और उसमें कुछ जानदार बुनियादी तत्वों की कमी है। पूंजीवाद से बंधे हुए लोकतंत्र ने बेशक उसकी बहुत-सी बुराइयों को कमजोर किया है और दरअसल एक-दो पीढ़ियों पहले के मुकाबले उसकी शक्ल आज अलग है। औद्योगिक देशों में सतत और सुनिश्चित आर्थिक विकास हुआ है। दूसरी बड़ी लड़ाई की भीषण हानियों से भी बहुत ज्यादा विकसित देशों में यह प्रवाह

नहीं रुका है। इसके अलावा, इस आर्थिक विकास का लाभ जुदा-जुदा अंशों में सभी तरह के लोगों को मिला है। यह बात औद्योगिक दृष्टि से पिछड़े देशों पर लागू नहीं होती। दरअसल, उन देशों में विकास का संघर्ष बहुत कठिन है और कभी-कभी कोशिशों के बावजूद न केवल आर्थिक विषमताएं बनी रहती हैं, बल्कि हालत बदतर होती दिखाई देती है। मामूली तौर पर यह कहा जा सकता है कि पूंजीवादी समाज की ताकतें अगर खुली छोड़ दी जायं तो अमीर को अधिक अमीर और गरीब को अधिक गरीब बनाती हैं और इस तरह उनके बीच की खाई को चौड़ा करती हैं। यह बात देशों पर और उनके भीतर के समूहों, क्षेत्रों या वर्गों पर भी लागू होती है। विभिन्न लोकतंत्री प्रक्रियाएं इन सामान्य प्रवाहों पर अंकुश लगाती हैं। इसलिए स्वयं पूंजीवाद ने कुछ समाजवादी विशेषताओं को अपनाया है, हालांकि उसकी ख़ास शक्ल पहले जैसी बनी है।

समाजवाद बेशक जानबूझकर सामान्य प्रक्रिया में दखलअंदाजी करता है और इस तरह न सिर्फ उत्पादक शक्तियों को मदद देता है, बल्कि विषमताओं को कम करता है। लेकिन समाजवाद क्या है? इसका ठीक उत्तर देना मुश्किल है और उसकी अनेक व्याख्याएं हैं। कुछ लोगों की समाजवाद की कल्पना धुंधली है। वे कहते हैं कि वह हितकारी है और समानता लाना चाहता है। इससे हम बहुत दूर नहीं जाते। समाजवाद बुनियादी तौर पर पूंजीवाद से जुदा रास्ता है, हालांकि मेरे खयाल से यह सही है कि उनके बीच की चौड़ी खाई कम हो रही है, क्योंकि समाजवाद के बहुत-से विचार पूंजीवादी व्यवस्था

में भी धीमे-धीमे शामिल किये जा रहे हैं। समाजवाद केवल जिन्दगी का एक तरीका ही नहीं है, बल्कि सामाजिक और आर्थिक समस्याओं का एक वैज्ञानिक हल है। अगर समाजवाद किसी पिछड़े और अविकसित देश में दाखिल किया जाय तो वह अचानक उसके पिछड़ेपन को कुछ कम नहीं कर देगा। असल में वहां पिछड़ा हुआ और गरीबी से पीड़ित समाजवाद होगा।

बदकिस्मती से साम्यवाद के कई राजनैतिक पहलुओं ने हमारी समाजवाद की कल्पना को बिगाड़ दिया है। इसके अलावा साम्यवाद का संघर्ष का तरीका हिंसा को खास जगह देता है। इसलिए समाजवाद को इन राजनैतिक तत्वों अथवा हिंसा की अनिवार्यता से जुदा करके देखना चाहिए। वह हमसे कहता है कि किसी भी समाज के सामाजिक, राजनैतिक और बौद्धिक जीवन का स्वरूप उसके उत्पादक साधनों के अनुसार निश्चित होता है। जैसे-जैसे ये उत्पादक साधन बदलते और विकसित होते हैं, वैसे-वैसे समाज का जीवन और विचार बदलता है।

साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद ने प्रगतिशील सामाजिक ताकतों को दबाया है और दबाता है। लाजमी तौर पर वह सहूलियतों का उपभोग करनेवाले लोगों या वर्गों के साथ गठबंधन करता है, क्योंकि वह पुरानी सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था को कायम रखना चाहता है। देश आजाद हो जाने के बाद भी वह आर्थिक दृष्टि से दूसरे देशों पर निर्भर बना रहता है। इस

तरह की हालत को अलंकार की भाषा में घनिष्ठ सांस्कृतिक और आर्थिक सम्बन्धों का नाम दिया जाता है।

हम कभी-कभी गांव के खुद अपने पैरों पर खड़े होने की बात करते हैं। इसे हमें विकेन्द्रीकरण के विचार के साथ नहीं मिलाना चाहिए, हालांकि यह उसका अंग हो सकता है। विकेन्द्रीकरण जहांतक हो सके, ज्यादा-से-ज्यादा ठीक है, मगर उसके नतीजे के तौर पर हम उत्पादन के पुराने और प्राथमिक तरीकों को अपनाये रहते हैं तो इसका सीधा मतलब यह है कि हम आधुनिक तरीकों का उपयोग नहीं करते, जिनसे पश्चिम के कुछ देशों ने बड़ी भारी भौतिक प्रगति की है। दूसरे शब्दों में, हम गरीब रहते हैं और इससे भी अधिक जनसंख्या के दबाव के आगे और भी अधिक गरीबी की ओर बढ़ते हैं। मुझे गरीबी के दुष्चक्र से बाहर निकलने का इसके सिवा कोई रास्ता नहीं दिखाई देता कि हम विज्ञान के जरिए मिलनेवाली शक्ति के नवीन साधनों का उपयोग करें। गरीब होने की वजह से हम बचत नहीं कर पाते, जिसे हम अन्नों की पैदावार के लिए लगा सकें और हम ज्यादा-से-ज्यादा नीचे धंसते जाते हैं।

हमें शक्ति के नये साधनों और आधुनिक तकनीक का उपयोग करके इन बाधाओं को दूर हटाना होगा। मगर यह करते समय हमें बुनियादी इन्सानी तत्व को और इस असलियत को नहीं भूलना चाहिए कि हमारा लक्ष्य इन्सान की तरक्की करना है और विषमताओं को कम करना है और हमको जीवन के नैतिक और आध्यात्मिक पहलुओं को नहीं भूलना चाहिए, जो संस्कृति

और सभ्यता के आधार होते हैं और जिन्होंने जीवन को कुछ उद्देश्य दिया है।

यह याद रखना होगा कि हम किसी समाजवादी या पूंजीवादी जादू की छड़ी से गरीबी को अचानक अमीरी में नहीं बदल सकते। इसका सिर्फ एक ही रास्ता है और वह यह कि हम कड़ी मेहनत करें, मुल्क की पैदावार बढ़ायें और उस पैदावार का ठीक-ठीक बंटवारा करें। यह लम्बा और कठिन काम है। कम विकसित देशों में पूंजीवादी तरीका इसका मौका नहीं देता। समाजवादी आधार पर योजनाबद्ध तरीके से ही स्थिर प्रगति हो सकती है, हालांकि इसमें भी समय तो लगेगा ही। इस क्रिया के दौरान में हमारे जीवन के स्वरूप और विचारधारा में धीमे-धीमे तब्दीली होगी।

योजना बनाना ज़रूरी है, वरना हम अपने सीमित साधनों का अपव्यय करेंगे। योजना बनाने के यह मानी नहीं कि हम जुदा-जुदा योजनाओं को इकट्ठा कर लें, बल्कि हमें ऐसा तरीका सोचना होगा, जिसके जरिए प्रगति की बुनियाद मजबूत और रफ्तार तेज हो सके, ताकि समाज सब मोर्चो पर आगे बढ़ सके। देश में आम गरीबी तो है ही, इसके अलावा देश के बड़े क्षेत्रों में भयंकर गरीबी की विशेष समस्या हमारे सामने है। हमें हमेशा कठिन चुनाव करना होता है। हम कुछ चुने हुए और अनुकूल क्षेत्रों में पैदावार बढ़ाने पर अधिक जोर दें या साथ-साथ पिछड़े क्षेत्रों के विकास की भी कोशिश करें, ताकि क्षेत्रों के बीच की असमानता कम हो सके। हमें बीच का रास्ता निकालना होगा और एक मिली-जुली योजना बनानी होगी। यह राष्ट्रीय

योजना कड़ी नहीं होती चाहिए। इसकी बुनियाद किसी कदर सिद्धांत पर नहीं होनी चाहिए, बल्कि मौजूदा असलियतों को ध्यान में रखकर बनाई जानी चाहिए। मेरे खयाल से उसे हिन्दुस्तान की मौजूदा हालतों में बहुत-सी जगहों पर निजी उद्योग को प्रोत्साहन देना चाहिए, हालांकि इस निजी उद्योग को लाजमी तौर से राष्ट्रीय योजना के अनुरूप होना चाहिए और ज़रूरी नियंत्रणों को मंज़ूर करना चाहिए।

भूमि-सुधारों की ख़ास अहमियत है, क्योंकि उनके बिना हिन्दुस्तान जैसे घनी आबादीवाले देश में, खेती की पैदावार में, कोई क्रान्तिकारी सुधार नहीं हो सकता। लेकिन भूमि-सुधारों का मुख्य लक्ष्य और भी गहरा है। वे समाज के पुराने वर्गगत ढांचे को खत्म करना चाहते हैं, जो गतिहीन हो चुका है।

हम सामाजिक सुरक्षा चाहते हैं, लेकिन हमें यह स्वीकार करना होगा कि विकास की अमुक मंजिल पा लेने के बाद ही सामाजिक सुरक्षा मुमकिन हो सकेगी।

यह साफ है कि आखिर में सबकुछ इस पर निर्भर करेगा कि हमारे देश के इन्सान कैसे हैं। इन्सान ही राष्ट्र की खुशहाली को बनानेवाले होते हैं और वे ही उसकी सांस्कृतिक प्रगति को मुमकिन बनाते हैं। इसलिए शिक्षा और तन्दुरुस्ती का बहुत ज्यादा महत्व है, ताकि गुणवान इन्सान तैयार हो सकें। हमारे पास साधनों की कमी है, मगर हमें हमेशा याद रखना होगा कि सही शिक्षा और अच्छी तन्दुरुस्ती से ही आर्थिक और साथ ही सांस्कृतिक और आध्यात्मिक प्रगति की नींव रखी जा सकेगी।

इस तरह राष्ट्रीय योजना के थोड़े समय के और लंबे समय के दोनों तरह के लक्ष्य होंगे। लंबे समय के लक्ष्य से हमें सही नजरिया मिलेगा। उसके बिना थोड़े समय में लक्ष्यों का विशेष अर्थ नहीं होता और हम अंधेरी गलियों में भटक जा सकते हैं। योजना हमें हमेशा दीर्घ दृष्टि से बनानी होगी और हमें उन स्थूल लक्ष्यों को भी ध्यान में रखना होगा, जिन्हें पाने की हम कोशिश कर रहे हैं। दूसरे शब्दों में, स्थूल योजना महत्व-पूर्ण है, हालांकि वह वित्तीय साधनों और आर्थिक परिस्थितियों से बंधी और जकड़ी होती है।

औद्योगिक नज़रिये से प्रगतिशील देशों में गुज़रे ज़माने में जो हो चुका है, वह हमपर आज बहुत कम लागू होता है। असल में ज़िन देशों ने तरक्की की है, उनका उद्योगीकरण जब शुरू हुआ तो प्रति व्यक्ति की, औसत आय की दृष्टि से, आर्थिक हालत आज के हिन्दुस्तान से ज्यादा अच्छी थी। इसलिए पश्चिमी अर्थशास्त्र हालांकि सहायक हैं, पर हमारी आज की समस्याओं पर अधिक लागू नहीं होते। यही हालत मार्क्सवादी अर्थशास्त्रों की है, जो अनेक तरह से समय से पीछे हो चुके हैं, हालांकि वे आर्थिक प्रक्रियाओं पर काफी रोशनी डालते हैं। इसलिए हमें अपना विचार खुद ही करना होगा। हम दूसरों की मिसाल से लाभ उठायंगे, लेकिन खासतौर से हम अपनी हालत के मुताबिक रास्ता खुद ही खोजने की कोशिश करेंगे।

हमारी समस्याओं के आर्थिक पहलुओं पर विचार करते

समय हमें हमेशा शान्तिमय साधनों का बुनियादी रास्ता याद रखना होगा और शायद जीवन-शक्ति-सम्बन्धी वेदान्त के आदर्श को भी दृष्टि में रख सकते हैं, जो कि जगत की हर वस्तु का अन्दरूनी आधार है।'[1]

---

१. अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की पत्रिका 'इकनोमिक रिव्यू' में प्रकाशित, १५ अगस्त, १९५८

: २० :

पंचायत—नींव का पत्थर

आपको मालूम है कि स्थानीय स्वशासन या पंचायत सरकारी इमारत की नींव है। अगर यह नींव मजबूत न हो तो उसपर खड़ी हुई इमारत कमजोर होगी। यह मानी हुई बात है कि जो लोग पंचायतों को चलाते हैं, उनमें कुछ अच्छाइयां हैं और कुछ कमियां भी हैं। हम यह जानते हैं और हमसे कहा जाता है कि हमें उनका भरोसा नहीं करना चाहिए। यह एक ऐसा तर्क है कि यदि उसे एक बार मान लिया जाय तो उसके गम्भीर नतीजे होंगे। हमें पता है कि उनके (पंचों) के हाथों गलतियां होंगी, लेकिन फिर भी हमें उन्हें काम करने और सीखने का मौका देना होगा। अगर हमें किसी संस्था में विश्वास नहीं तो जाहिर है कि हम उसे आगे बढ़ाने की कोशिश नहीं करेंगे।

कुछ समय पहले हिन्दुस्तान की सरकार ने देहाती वर्ग की पड़ताल करनेवाली समिति नियुक्त की थी। इस समिति ने देहातियों की कमियों पर रोशनी डाली थी और खासतौर पर सहकारी समितियां बनाने का सुझाव दिया था। मैं यह स्वीकार करता हूं कि हमारे लोगों में कमियां हैं और उन्हें अनुभव नहीं है और वे ग़लतियां करेंगे, लेकिन इसके अलावा और कोई रास्ता

नहीं है कि हम उनमें विश्वास रखें, उनपर भरोसा करें और उन्हें जिम्मेदारियां सौंपें। कभी-कभी जिम्मेदारियों का दुरुपयोग होगा, लेकिन जब हम ऊपर से कोई संगठन थोपना नहीं चाहते तो हमारे पास और कोई रास्ता नहीं है।

श्री एस. के. डे ने बहुत-सी बातों की, खासतौर से पंचायतों, उनके फैलाव, उनके हिसाब और उनके साधनों की चर्चा की है। इन बातों के बारे में कोई निश्चित नियम नहीं बना सकते। मेरी राय में हमें उन्हें ज्यादा-से-ज्यादा जिम्मेदारियां सौंपना चाहिए और उनपर भरोसा करना चाहिए। हम कुछ अधिकार अपने हाथों में रख सकते हैं, ताकि जब वे गलतियां करें तो उनको दुरुस्त कर सकें। अगर उन्हें हर बात के लिए हमसे सलाह लेनी पड़े तो उनकी जिम्मेदारी खत्म हो जायगी।

हमारी सरकारी मशीनरी में यह एक बुरी बात है कि वह कोई भी काम बहुत लोगों से सलाह-मशविरे लेने के बाद करती है और इसके लिए मामला बहुत-से लोगों के पास जाता है और कागज रंगे जाते हैं। इससे काम में देरी होती है और किसीको जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता, क्योंकि हर आदमी गलती दूसरे के सिर पर थोप सकता है। इससे कभी भी कार्य-कुशलता नहीं आ सकती। जब हमें बड़े-बड़े काम करने हैं, चाहे वे काम पांच-साला योजनाओं से ताल्लुक रखनेवाले हों या दूसरे हों, अगर कोई भी जिम्मेदारी लेने को तैयार न हो या कम-से-कम जिम्मेदारी लेने को तैयार हो तो काम में जरूर देरी होगी और हो सकता है कि काम हो ही न पावे।

सरकार का बहुत सारा रुपया सिन्दरी के रासायनिक खाद कारखाने, इस्पात के कारखानों और बड़ी नदी-घाटी-योजनाओं वगैरा पर खर्च होता है और हमें खर्च के बारे में सावधान रहना होगा, लेकिन यह सावधानी एक सीमा से आगे नहीं जानी चाहिए। हाल में अमरीकी विशेषज्ञ श्री एपलबी हिन्दुस्तान आये थे। उन्होंने अपनी रिपोर्ट में हमारे काम की तारीफ की है, पर यह शिकायत भी की है कि हमारी प्रणाली केवल ब्रिटिश काल के लिए ठीक थी, जबकि कुछ ज्यादा काम करने के लिए नहीं था। लेकिन आज जब हम सामाजिक, औद्योगिक या खेती वगैरा हर क्षेत्र में तरक्की करना चाहते हैं तो पुरानी प्रणाली लाभ-दायक साबित नहीं होती।

इस रिपोर्ट का कुछ असर हुआ, पर ज्यादा नहीं। सरकारी फाइलें जुदा-जुदा सचिवालयों या विभागों में घूमती रहती हैं और उनमें काग़ज़ रंगे जाते हैं और प्रशासकीय देरी से ज्यादा नुकसान-दायक और कोई दूसरी बात नहीं हो सकती। राष्ट्रीय धन और काग़ज़ की बर्बादी के अलावा इससे भ्रष्टाचार को भी बढ़ावा मिलता है। हमें इस देरी को मिटाना होगा। इसका एक ही तरीका है। आपका काम करने का तरीका ऐसा होना चाहिए कि कर्मचारी को उसके काम के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सके। ज्यादा-से-ज्यादा वह गलतियां करेगा, जिनके लिए आप उससे जवाब तलब कर सकते हैं, लेकिन उसे यह मालूम होना चाहिए कि यह उसकी जिम्मेदारी है, और किसीकी नहीं। प्रशासन में अधिकारों का विकेन्द्रीकरण होना चाहिए।

दुनिया केन्द्रीकरण की ओर झुक रही है। औद्योगिक क्षेत्र में बड़े उद्योग छोटे उद्योगों को हड़प जाते हैं। व्यापार पर भी यही नियम लागू होता है। केन्द्रीकरण मशीन-युग की उपज है। उसे रोकना मुमकिन नहीं है। किन्तु अगर हम उसपर अंकुश नहीं लगायंगे तो यह हानिकारक होगा। कुछ ऐसी बातें हैं, जहां विकेन्द्रीकरण नहीं हो सकता। उदाहरण के लिए मद्रास के रेल के डिब्बे बनाने के संयुक्त कारखाने को ले लीजिये। पर मैं यहां प्रशासन की बात कर रहा हूं।

कुछ हद तक केन्द्रीकरण जरूरी है, लेकिन विकेन्द्रीकरण बहुत जरूरी है। जब हम प्रशासन में विकेन्द्रीकरण शुरू करते हैं तो हम पंचायत तक पहुंचते हैं, जो सबसे छोटी इकाई है। पंचायत, सहकारी समिति की तरह, बहुत बड़ी नहीं होनी चाहिए।

यह जरूरी है कि एक पंचायत के लोग एक-दूसरे को जानते हों और एक परिवार की तरह काम करें। अगर कोई गांव बहुत छोटा हो तो दो-तीन गांवों को एक पंचायत में शामिल किया जा सकता है। मैं नहीं समझता कि पंचायत का आकार महज़ उसके साधनों के हिसाब से तय किया जाय। यह उन लोगों की संख्या के आधार पर तय किया जाय, जो सहकारी बुनियाद पर काम कर सकें।

आप सबको मालूम है कि चीन में क्या हो रहा है। वहां मजबूत केन्द्रीय सरकार है, जिसके सिद्धान्त हमारे सिद्धान्तों से जुदा है, लेकिन जिसका काम करने का ढंग विकेन्द्रित है, जिससे लोगों में काम करने की लियाकत पैदा होती है। यह जरूरी है कि हम

अपने लोगों में जोश पैदा करें, जिससे वे काम कर सकें। अगर आप यह नहीं करेंगे तो लोग काम करना नहीं सीखेंगे।

हमें अपने उद्योगों और कृषि दोनों का विकास करना है। हमारे जैसे देश के लिए सुधरी हुई खेती जरूरी है और हमारी औद्योगिक प्रगति का भी उसपर दारोमदार है। चाहे उद्योग हो या खेती, उन्हें चलाने के लिए प्रशिक्षित आदमियों का होना बहुत जरूरी है। यह प्रशिक्षण कामों को करने से ही मिल सकता है। हमारे तकनीकी और कृषि-पाठ्यक्रमों में कुछ व्यावहारिक काम भी हैं, लेकिन मैं महसूस करता हूं कि उनकी मात्रा अधिक होनी चाहिए। प्रशासन में अच्छे अभ्यास की व्यवस्था है, पर किसान को प्रशासनिक स्कूल में नहीं भेजा जा सकता। वह पंचायत या सहकारी समिति में ही शिक्षण पा सकेगा। दस दिन पहले मैं दिल्ली के पास एक गांव में गया था। मैंने लोगों से कहा कि आप पंचायत के जरिए अपने विकास का काम करें। लोगों ने कहा कि हमारे यहां पंचायत ही नहीं है। यह शर्म की बात है कि दिल्ली के एक गांव में अभी तक पंचायत नहीं बन सकी। अगर हम यह सोचते हों कि हम छलांग लगा सकते हैं, चोटी के कुछ लोगों को प्रशिक्षित करके अपना मकसद हासिल कर लेंगे, तो हम बहुत बड़े भ्रम में हैं!

हमने समाजवादी सहकारी समाज बनाने का अपना राष्ट्रीय लक्ष्य स्वीकार किया है। समाजवादी सहकारी समाज में हम कोई बात ऊपर से नहीं थोप सकते। उसकी शुरुआत नीचे से, गांव से, गांव-पंचायत या ग्राम सहकारी समिति से होनी चाहिए।

सामुदायिक विकास-कार्यक्रम के सिलसिले में पिछले चन्द महीनों में कुछ कैम्प लगे थे और मुझे उनमें से कुछमें जाने और पंचों से मिलने का मौका मिला था। मैंने देखा कि वे जागे हुए हैं और अपने कामों में दिलचस्पी लेने लगे हैं। अफसर उनके साथ बैठे, उनसे बातें कीं और उनसे बराबरी के नाते मिले। हमें उनके दिमागों की खिड़कियां खोलनी हैं। अफसरी ढंग से यह नहीं किया जा सकता। अगर आप बड़े बनकर उनसे बात करेंगे तो कोई असर नहीं पड़ेगा। आपको नीचे उतरना होगा और उनके स्तर पर जाकर उनसे बात करनी होगी।

मैं इस पहलू के बारे में आपसे बात कर रहा हूं, क्योंकि मुझे उसका कुछ अनुभव है। मैं किसान नहीं हूं। मैंने कभी खेती नहीं की और न कुछ पैदा ही किया और न मेरे पास खेती के लिए एक गज जमीन भी है, लेकिन मेरे पास अपने खुद के और असली अनुभव हैं और मैं महसूस करता हूं कि मेरे पास उनके दिमाग और दिल की चाबी है। मैं खुद अपनी तारीफ़ नहीं कर रहा हूं। मैं उनसे बराबरी के नाते मिलता हूं। मैं उनकी बुद्धि और व्यक्तित्व का आदर करता हूं। इसलिए वे मेरी बात मानते हैं।

आपको इस तरह श्रम करना है। अफसरी ढंग गलत है और उसे छोड़ना होगा। अगर कोई अफसर जीप में बैठकर दौड़ते-भागते किसी गांव में जाता है तो वह गांववालों के साथ गहरे सम्पर्क में नहीं आता। अगर वह उनके पास जाकर उनकी चार-पाई पर बैठता है तो वह उनपर असर डाल सकता है। अफसर

और लोगों के बीच जो पर्दा या दीवार है उसे हटाना होगा और यही तरीका है, जो कारगर हो सकता है।

मेरी यह राय है कि सरकारी अफसरों को, चाहे वे बड़े हों या छोटे, साल में कुछ दिन गांवों में किसानों के साथ उनके खेतों में काम करना चाहिए। इससे उनकी तन्दुरुस्ती अच्छी होगी और अनुभव भी बढ़ेगा। मेरी यह राय भी है कि हिन्दुस्तान में हरेक आदमी को, हर लड़के और लड़की को, लाजमी तौर से समाज-सेवा के लिए भरती किया जाय। दूसरे देशों में अनिवार्य सैनिक भरती है। हम सैनिक सेवा नहीं चाहते, पर सैनिक अनुशासन अवश्य चाहते हैं।

मैं किसी पंचायत का पंच नहीं रहा। आप उनकी समस्याओं को ज्यादा अच्छी तरह जानते हैं, लेकिन मैं आपको उनके साथ बर्ताव करने का ढंग बता सकता हूं। आपका ढंग बौद्धिक और साथ ही भावनात्मक भी होना चाहिए। आप किसानों के पास बराबरी के नाते जायं और जितनी ही ज्यादा जिम्मेदारी आप उन्हें सौंपेंगे, उतना ही ज्यादा फायदा होगा।[1]

---

१ स्थानीय स्वायत्त शासन की केन्द्रीय परिषद की चौथी बैठक में भाषण। २७ अक्तूबर, १९५८

: २१ :

किसानों पर भरोसा करो

खेती का सबसे अधिक महत्व है। योजना आयोग के उपाध्यक्ष ने मुझे उस दिन लिखा और एक प्रसिद्ध अर्थशास्त्री के निबन्ध से यह उद्धरण दिया, "औद्योगिक क्रान्ति का तरीका यह होगा कि खेती की पैदावार बढ़ाई जाय और उस पैदावार के नतीजों को कृषि से औद्योगिक विकास में लगाया जाय।"

यह बुनियादी चीज है। लेकिन हमने इसे पूरी तरह से नहीं पकड़ा है। हमने खेती को काफी महत्व नहीं दिया है। अक्सर कहा जाता है कि उसके बारे में एक कमेटी की रिपोर्ट है। यह भी सच है कि कुछ राज्यों के कृषि-विभागों में योग्य आदमियों की कमी है। कृषि-सेवाओं को कम महत्व की सेवाएं समझा जाता है। इससे हमारे दिमाग़ी नजरिये का पता चलता है।

हम इस देश में औद्योगिक क्रान्ति चाहते हैं। इस क्रान्ति का अनेक बातों पर दारोमदार है। उसकी एक खास बुनियाद कृषि की पैदावार है और इसलिए हमें फिर कृषि पर आना होगा। इसमें कोई शक नहीं कि वर्षा हो या न हो, खेती की पैदावार काफी बढ़ाई जा सकती है। इस बारे में हमें साफ़ होना चाहिए। बेशक, वर्षा से बहुत-कुछ फर्क पड़ता है, लेकिन हमें

दूसरे साधनों से भी सारे हिन्दुस्तान में पैदावार बढ़ानी होगी और हम अभी तक यह नहीं कर पाये हैं।

हम खेती के सिलसिले में सैकड़ों तरह की बातें करते हैं। सभी अच्छी बातें हैं। हम उनके बारे में सहमत हैं। कौन यह नहीं मानता कि रासायनिक खाद, प्राकृतिक खाद, हरा खाद, मेड़बन्दी, सिंचाई, बीजों का चुनाव आदि अच्छी चीजें हैं? उनके बारे में विवाद नहीं है। हम पुरानी स्थिति पर पहुंच जाते हैं। हम चाहते हैं कि काम आगे बढ़े। मगर इस समस्या के बारे में या तो हमारे दिमागी नजरिये में या हमारे प्रशासनिक और संगठनात्मक तरीके में कुछ कमी या गड़बड़ी है।

शायद सबसे महत्वपूर्ण रुकावट यह है कि हम लोगों की शक्तियों को पूरी तरह उभार नहीं पाये हैं, उनकी काम करने की ताकत को जगा नहीं पाये हैं, जिससे वे पूरी हिम्मत और खुशी-खुशी पैदावार बढ़ाने के काम में कूद पड़ें। दूसरे शब्दों में, योग्य अफसर देने के अलावा एक महत्व का काम यह होगा कि हम किसानों में से ही कुछ जिम्मेदार लोगों को चुन लें। क्या हमने यह किया है? हो सकता है, कुछ हद तक हमने ऐसा किया हो।

मैं खेद के साथ कहता हूं कि सामुदायिक विकास-आन्दोलन इस बारे में कुछ हद तक ही कामयाब है। ऐसा क्यों हुआ? मेरे खयाल से किसानों का सहयोग हासिल करने का एक ही रास्ता है कि उनपर भरोसा किया जाय और उन्हें आगे बढ़ने का अधिकार दिया जाय। यह दलील दी जाती है कि किसान

अधिक जानता नहीं है । लेकिन यह बुनियादी तौर से गलत दलील है । अंग्रेज हमारे विरुद्ध यही दलील देते थे । हम किसानों को तकनीकी और दूसरी तरह की सहायता दे सकते हैं, लेकिन खासतौर से हमें गांवों में सत्ता और अधिकार लोगों के हाथों में सौंप देने चाहिए । उन्हें काम करने दीजिये और हजार गलतियां करने दीजिये। इस सम्भावना पर भयभीत मत होइये। हमारा आन्दोलन हमारी बंधी हुई विचारधारा की वजह से ही बंधा हुआ है । हमें पंचायतों को अधिकार सौंपना चाहिए।

मैंने अक्सर कहा है कि अगर सहकारी समिति में अफसर मौजूद हैं तो वह समिति दरअसल सहकारी समिति नहीं है। सहकारिता के बुनियादी विचार के ही यह खिलाफ है कि सहकारी समिति को कोई अफसर चलाये । अफसर उसकी मदद करे, लेकिन दूर से । उसे सरकारी संगठन नहीं होना चाहिए ।

ग्राम सहकारी समिति में सदस्य एक-दूसरे को जानते हैं। वे गांव के अच्छे आदमी और बुरे आदमी को जानते हैं। व्यक्तियां की आपसी जानकारी और ताल्लुकातों की ही अहमियत है । जब बड़ी तादाद में लोग एक संगठन में आ जाते हैं तो किसान उसमें खो जाता है और सोच ही नहीं पाता कि उसे क्या करना है । इसलिए खेती के बारे में या और किसी बारे में हमारा यह तरीका होना चाहिए कि हम ग्राम-पंचायत और ग्राम सहकारी समिति को सत्ता सौंप दें, वरना किसान कामों के करने में समान साझेदारी की भावना अनुभव नहीं करेगा।

जमीन की मालकियत की अधिकतम सीमा के बारे में जितना अधिक मैं सोचता हूं उतना ही इस नतीजे पर पहुंचता हूं कि वह जरूरी है, लेकिन सहकारी संगठनों के बिना वह चलनेवाली नहीं है। सहकारी संगठन उसके जरूरी हिस्से हैं। हमें दोनों साथ-साथ चाहिए, वरना कुछ-न-कुछ गलत होगा।[१]

---

१ दिसम्बर १९५८

: २२ :

लाखों मकान

जब आप गांवों में जाते हैं तो आपको बिलकुल दूसरे ही हालात देखने को मिलते हैं और मैं आशा करता हूं कि यह भवन-निर्माण-परिषद नगरों से बहुत दूर गांवों में किसी-न-किसी तरह के मकान बनाने की बात सोचती होगी। आप उन्हें झोंपड़ियों का या और कोई नाम दे सकते हैं। ये मकान ऐसे होने चाहिए कि ग्रामीण लोग स्थानीय सामग्री से उनका निर्माण कर सकें।

यहां मेरे सहयोगी श्री डे के सामुदायिक विकास-मंत्रालय को कुछ करना होगा। गांवों की हालत बदलना हो तो हमें करीब एक करोड़ मकान बनाने होंगे। बेशक, वे मकान छोटे होंगे। कोई भी सरकारी एजेंसी इतने विशाल पैमाने पर मकानों को बनाने का काम हाथ में नहीं ले सकती। उसे ग्रामीणों को उन्हें बनाने में मदद देनी चाहिए। अगर सामुदायिक विकास-मंत्रालय इस काम को हाथ में ले ले—एक मानी में उसने लिया भी है—तो यह काम कहीं ज्यादा सस्ते में और तेजी से किया जा सकता है। लोग इस काम को तभी कर सकेंगे जब आप अपने मौजूदा नियमों और उपनियमों को काफी सरल बना लेंगे। आप लोगों के जोश को जागृत कर दें और साथ ही उन्हें

उस जोश के किनारे ले जाकर खड़ा कर दें, यह नहीं हो सकता। दूर के दफ्तर में महीनों पत्र-व्यवहार चलता रहता है और लोगों का जोश ठंडा पड़ जाता है और हर कोई असंतुष्ट और नाराज हो जाता है।

काम करने के कुछ ऐसे तरीके और नियम बनाने होंगे, ताकि लोग, जहांतक मुमकिन, हो जल्दी-से-जल्दी काम को आगे बढ़ा सकें। कुछ परियोजनाओं में—मैं नहीं जानता कि यह मकान बनाने की यो नाओं पर भी लागू होता है—भारत सेवक समाज जैसी संस्थाओं ने योग दिया है और लोगों को श्रम करने के लिए उकसाया है। शुरू में पहला बड़ा कार्यक्रम बिहार में पूरा किया गया, जहां लोगों ने कोसी परियोजनाओं में काम किया। दिल्ली में, शुरू की हिचकिचाहट के बाद, इस तरह के काम में लोगों ने ज्यादा-से-ज्यादा साथ दिया है। यहां हाल में कुछ विस्थापित लोग विश्वविद्यालय के क्षेत्र से हटकर दूसरी जगह बसे हैं। उनके लिए झोंपड़ियां बनानी पड़ीं और दिल्ली निगम, भारत सेवक समाज और दूसरों ने इस काम में मदद दी। काम जल्दी से और कुशलता से पूरा किया गया। मैं नहीं कहता कि जो मकान बने हैं, वे सुन्दरता और कार्य-कुशलता के नमूने हैं, किन्तु सब दृष्टियों से काम बहुत संतोषजनक हुआ है। इसलिए हमें लोगों से काम कराने के ये सभी तरीके खोजने होंगे और किसी सरकारी दफ्तर के घंटे में बन्द नहीं रहना होगा, जहां टेण्डर मांगे जाते हैं और काम करने के लिए ठेकेदारों का चुनाव किया जाता है।[१]

---

१. भवन-निर्माण-परिषद के तीसरे अधिवेशन का उद्घाटन-भाषण। १२ फरवरी १९६४।

: २३ :

समाज-कल्याण और सामुदायिक विकास

अध्यक्ष की तकरीर में बहुत-से मसलों का जिक्र किया गया है और मैं उनपर बोलने का अपनेको बहुत अधिकारी नहीं मानता, लेकिन मैं एक-दो बातें करना चाहूंगा।

एक तो यह कि मैंने समाज कल्याण बोर्ड और सामुदायिक विकास-आन्दोलन के कामों में ताल-मेल करने का स्वागत किया है। दोनों का काम करीब-करीब सारे हिन्दुस्तान में है और दोनों के लक्ष्य भी बुनियादी तौर पर एक-से हैं और यह बदकिस्मती की बात होगी, यदि वे अलग-अलग दिशाओं में जायंगे या एक-दूसरे से अलग रहकर काम करेंगे। उनके कामों में गहरा तालमेल होना चाहिए और समाज कल्याण बोर्ड को सामुदायिक विकास के व्यापक आदर्श के अन्दर समाज कल्याण का काम करना चाहिए।

हम पंचायतों और सहकारी समितियों वगैरा का संगठन करने के काम में जुटे हैं। मेरे खयाल से समाज कल्याण बोर्ड को भी सीधे रूप में नहीं, बल्कि और किसी रूप में इस काम में दिलचस्पी लेनी चाहिए। मैं यह इसलिए कहता हूं कि जिन्दगी के मसलों से अलग होकर जो काम किया जाता है, वह मुझे ज़रा भी अच्छा नहीं लगता। मिसाल के लिए अनाथालयों की स्थापना

की जाती है—मैं इस अनाथ शब्द से नफरत करता हूं—विधवा आश्रम स्थापित किये जाते हैं। ये काम अपनी जगह ठीक हो सकते हैं, किन्तु यह काम टुकड़ों में हुआ। कुछ लोगों को हमने चुन लिया मदद देने के लिए, चूंकि वे बेसहारा हैं। इस तरह के काम के लिए प्रशिक्षण देने के लिए हम प्रशिक्षण संस्थाएं चला सकते हैं, मगर हमें अनाथालय जैसे शब्द छोड़ देने चाहिए, जो अपराधी जाति के बिल्लों के समान लगते हैं। बच्चे को यह महसूस होता रहता है कि उसकी देखभाल करनेवाला कोई नहीं है—वह कहता है—"मेरे कोई मां-बाप नहीं है।" यह बुरी बात है।

लेकिन अगर आप गांव में, शहर में जिंदगी के जीते-जागते मसलों को हल करने की कोशिश करें और समाज कल्याण-कार्य का उससे ताल्लुक हो तो आप एक लंबे-चौड़े और फैले हुए आन्दोलन के अंग होंगे, न कि आपका काम इक्की-दुक्की संस्थाओं में बंधा होगा, जो छुट-पुट अच्छा काम करती रहती हैं। इन संस्थाओं की यहां-वहां जरूरत हो सकती है, किन्तु उनका दृष्टिकोण, अगर मैं कहूं तो, कुछ 'बड़प्पन' लिये होता है, जैसा कि खाते-पीते वर्ग का, कम खाते-पीते की तरफ होता है। इस नज़रिये को कभी-कभी ठीक ठहराया जा सकता है, मगर मैं महसूस करता हूं कि देश की समस्याओं को बड़े पैमाने पर हल करने की कोशिश में लोगों को शामिल करने का हमारा नज़रिया होना चाहिए। आप गांवों में काम करते हैं। आप गांव की पंचायत के काम में दिलचस्पी लें और औरतों को उसे समझने और उसमें भाग लेने को उकसायें। इसकी

शुरुआत करना कठिन होगा, लेकिन आगे चलकर आप कामयाब होंगे। गांव में सहकारी समितियां भी होंगी। सेवा सहकारी समितियों पर बहुत जोर दिया गया है। मेरे खयाल में सहकारी समितियों में सीखी-समझी औरतों के काम के लिए काफी बड़ा मैदान है। इस काम के लिए महिलाओं को तैयार कीजिये और उसमें उन्हें लगा दीजियें। मर्दों को यह मत समझने दीजिये कि औरतों को उससे अलग रखा जा सकता है।[1]

---

१. राज्य समाज कल्याण सलाहकार बोर्ड की पांचवी वार्षिक बैठक नई दिल्ली का उद्घाटन, भाषण—१८ मार्च, १९५९।

: २४ :

सेवा का आदर्श

यहां आने के बाद, कुछ देर के लिए ही सही, मैं इस संस्था को देखने के लिए बेचैन था, क्योंकि उसके बारे में श्री एस. के. डे के साथ लम्बी चर्चा हो चुकी थी। वह भी मेरी इस मुलाकात के लिए बेकरार थे। मैंने देखा कि वह इस शोध-संस्था को बहुत महत्व देते हैं और उसके काम से उन्हें तसल्ली है।

जाहिर है कि थोड़े समय की मुलाकात के बाद आपके काम के बारे में मैं ज्यादा कुछ नहीं कह सकता। फिर भी आपके काम के तरीके के बारे में उससे कुछ-न-कुछ खयाल बनाने में मदद मिलेगी और यह अपने-आपमें फायदेमंद है।

मेरे खयाल में आपने वाद-विवाद का जो तरीका अपनाया है, वह तकरीर सुनने के चालू तरीके से अच्छा तरीका है। आपने उसे 'सिण्डीकेट' का नाम दिया है, यानी आप एक जगह बैठकर हर पहलू पर अलग-अलग चर्चा करते हैं और फिर सब पहलुओं की एक साथ चर्चा करते हैं।

एक मानी में हम सामुदायिक विकास-आन्दोलन में जो काम करने की कोशिश कर रहे हैं, उसमें कुछ क्रान्तिकारी नयापन नहीं है। दूसरे देशों ने भी यही करने की कोशिश की है। मगर इससे कहीं ज्यादा मानी रखनेवाली शक्ल में वह उस प्रदेश

की खोज-यात्रा है, जिसकी लंबी-चौड़ी विशेषताएं हैं—आप उस प्रदेश से परिचित हैं, किन्तु आप उसकी केवल मोटी विशेषताएं ही जानते हैं—और इसीलिए यह खोज-यात्रा ज्यादा कठिन और ज्यादा प्रेरणा देनेवाली है।

यह कहा जा सकता है कि हमारे अनेक कामों में शायद सबसे ज़रूरी काम सामुदायिक विकास-आन्दोलन का है, जिसके बड़े नतीजे निकलने की संभावना है। इस आन्दोलन में आप देश की बुनियादी सामग्री—मनुष्यों से व्यवहार कर रहे हैं। आप उन्हें उनकी रूढ़ियों से बाहर निकाल रहे हैं और कुछ दिमागी और जिस्मानी आदतों को बढ़ाने में उनकी मदद कर रहे हैं—आप उनमें कुछ हलचल लाना चाहते हैं। उनको खास-खास उद्योगों का और दूसरा प्रशिक्षण भी आप देंगे ही, चाहे वह खेती के क्षेत्र में हो चाहे दूसरे क्षेत्र में। यह बुनियादी बात है, क्योंकि, आखिर में, किसी देश का विकास या दर्जा उसके लोगों की काबलियत से ही नापा जाता है। और सब बातें मामूली हैं। और लोगों की काबलियत देश के हर क्षेत्र के दरअसल कुछ चोटी के आदमियों में व्यापक रूप से बांटी जा सकती है। विज्ञान, इंजीनियरिंग, चिकित्सा, प्रशासन या कोई भी क्षेत्र हो, चोटी के आदमी यानी प्रथम श्रेणी के आदमी ही देश को कोई दर्जा दिलाते हैं। किन्तु कुछ चोटी के आदमियों का होना ही काफी नहीं हो सकता। आपके यहां जन साधारण, यानी आम लोगों की भी कुछ उच्च श्रेणी होनी चाहिए। अगर आपके यहां यह ऊंची श्रेणी न हुई तो फिर वहुत-से चोटी के आदमी भी आपके यहां नहीं हो सकते; क्योंकि उनका जन्म उस साधारण समाज

से ही होता है। आप योग्य लोगों को पैदा करने की कोशिश नहीं कर रहे हैं, बल्कि आप देश में आदमियों का वह विशाल समाज बनाने की कोशिश कर रहे हैं, जिसमें उच्च श्रेणियों के आदमी निकलेंगे और हम चाहते है कि उस समाज का विकास करने का अवसर मिले। यह सबसे ज्यादा महत्व की बात है।

आप सीधे तौर पर औद्योगिक या तकनीकी प्रशिक्षण नहीं दे रहे हैं। यह काम तो दूसरे लोग भी करते हैं। किन्तु तकनीकी या औद्योगिक प्रशिक्षण का दारोमदार बहुत हद तक हिन्दुस्तानी कारीगरों की पैदाइशी काबलियत पर है। पिछले कुछ सालों में, खासकर दूसरे महायुद्ध के काल में, हालात ने ब्रिटिश सरकार को कुछ हिन्दुस्तानी उद्योगों का विकास करने के लिए मजबूर किया। लोगों में धुंधली शंकाएं थीं कि हिन्दुस्तानी मज़दूर को उद्योगों की बारीक बातों की जानकारी कहांतक दी जा सकेगी। किन्तु ताज्जुब की बात यह हुई कि हिन्दुस्तानी मज़दूर उन कामों में गैर-मामूली शक्ल में कुशल पाये गए, यानी उनके हाथ सधे हुए थे। यह सवाल हाथों को साधने का है। दिमाग की योजना हाथों में रहती है और हमारे कारीगर कुशल यंत्र-विशारद बन गये। कुछ समय पहले एक उच्च-स्तरीय रूसी दल हिन्दुस्तान आया था। उन्हें हमारे कुछ तकनीकी कारीगरों की कुशलता देखकर अचरज हुआ। उनके हाथों के चलाने के ढंग ने उन्हें बहुत-कुछ बता दिया जिसका फैसला बहुत सही मशीनें भी आसानी से नहीं कर सकतीं। मैंने यह मिसाल किसी भी दिशा में लोगों की काबलियत को जाहिर करने के लिए ही दी है। इन्सान

में बुनियादी गुण होता है चरित्र का—उसमें चरित्र-बल होना चाहिए, अगर आप इजाजत दें तो मैं कहूंगा कि चरित्र का बड़प्पन होना चाहिए। उसके अलावा काम करने की कुछ मानसिक, बौद्धिक और शारीरिक लियाकत भी होनी चाहिए। काम करने की लियाकत जरूरी है, क्योंकि आलसी आदमी ज्यादा पैदा नहीं कर सकते।

इसलिए सामुदायिक विकास-आन्दोलन देहाती हिन्दुस्तान की जड़ता की बुनियादी वजह पर और हमारी तरह-तरह की कमजोरियों पर चोट कर रहा है और जितनी ही यह बुनियादी वजह दूर होगी उतनी ही हिन्दुस्तान की बड़ी आबादी हरकत में आयगी। इसलिए मुझे इस बारे में ज्यादा दिलचस्पी नहीं है कि यहां-वहां क्या किया गया है, हालांकि स्थूल सफलताओं की अहमियत है। किसी भी आदमी या समाज की सच्ची कसौटी यह होगी कि वह कितना अपने पैरों पर खड़ा हुआ है।

मुझे यह जानकर खुशी हुई है कि आप इन विषयों पर पहले तो सरकारी दलों और गैर-सरकारी यानी विधायकों के दलों में विचार कर रहे हैं और दूसरे उन आदमियों के साथ चर्चा करेंगे जिनके इस आन्दोलन के साथ निजी सम्पर्क रहे हैं और जो उसके बारे में जानकारी रखते हैं। इस तरह की चर्चाओं से ही आप अपनी कठिनाइयों और कमियों का पता लगा सकेंगे। यह सरकारी और गैर-सरकारी का भेद, जो अंग्रेजों के जमाने से चला आ रहा है, एक मजाक है; असल भेद सरकारी कर्मचारियों और गैर-सरकारी कर्मचारियों में होना चाहिए। इस काम के दौरान में सरकारी कर्मचारी जितना ही ज्यादा गैर-सरकारी

बनता है, उतना ही ज्यादा लायक बनता है। और गैर-सरकारी कार्यकर्त्ता जितना ज्यादा सरकारी कर्मचारी का अनुशासन अपनाता है उतना ही लायक बनता है। एक होता है आन्दोलन का तरीका, जो उपयोगी है, क्योंकि वह सार्वजनिक मेल-मुलाकातों के लिए भी अच्छा है। दूसरा है व्यवस्थित तरीका, जिसे साधारणतः सरकारी कर्मचारी ही अपना सकता है। इन दोनों तरीकों में अन्तर है। इसलिए साथ मिलकर काम करने से दोनों पक्ष एक-दूसरे के निकट आयंगे—सरकारी कर्मचारी और गैर-सरकारी लोग एक-दूसरे से सीखेंगे।[1]

---

१. सामुदायिक विकास की केन्द्रीय अध्ययन और शोध-संस्था, मसूरी की पांचवीं विचार-गोष्ठी में भाषण, अप्रैल १९५९।

: २५ :

एक लाभकारी तरीका

कल मैं मसूरी में था और सामुदायिक विकास-संगठन की शोध-संस्था में गया था। मैंने वहां जो कुछ देखा, उसका मुझ-पर बहुत असर हुआ। वहां करीब पचास-साठ लोग एक साथ पांच से छह हफ्ते की ट्रेनिंग लेते हैं और फिर उसके बाद उनकी जगह एक नया दल आ जाता है। हरेक दल में कुछ सरकारी कर्मचारी और गैर-सरकारी आदमी होते हैं। मैंने देखा कि वे टोलियों में बंटकर काम करते हैं। हरेक समूह को 'सिण्डीकेट' कहते हैं, जो अलग से काम करता है। हर 'सिण्डीकेट' एक विषय पर गरमजोशी के साथ चर्चा कर रहा था। ऐसे सात सिण्डीकेट वहां थे और विचार यह है कि वे एक मसले पर करीब दो हफ्ते चर्चा करेंगे। फिर वे अपनी रिपोर्ट तैयार करेंगे और उसे सभी 'सिण्डीकेटों' में बांट देंगे। आखिर में वे एक जगह इकट्ठे होंगे। जाहिरा मुझे सिर्फ तकरीर सुनने के मुकाबले यह तरीका ज्यादा अच्छा लगा। इसमें उन्हें विचार करने और एक-दूसरे की नुक्ता-चीनी करने का मौका मिलता है और इस तरह एक विषय पर उनका सोचना ज्यादा गहराई से होता है।

सामुदायिक विकास जैसे विषय को इस तरह से समझने-बूझने के तरीके ने मुझपर असर डाला है, क्योंकि यह विषय ऐसा

नहीं है, जिसकी रफ्तार रुक जाय, बल्कि यह बढ़ता रहनेवाला विषय है। एक मानी में सामुदायिक विकास अपने जुदा-जुदा पहलुओं में सार्वजनिक प्रशासन के बहुत-से कामों को समेट लेता है। हालांकि वह सार्वजनिक प्रशासन की कथित ऊंची श्रेणियों को नहीं छूता, किन्तु वह देहाती इलाकों को तो छूता ही है और उस क्षेत्र की करीब-करीब हर चीज का सामुदायिक विकास से ताल्लुक आता है। मैं महसूस करता हूं कि सार्वजनिक प्रशासन की ऊंची श्रेणियों के मुकाबले नीची श्रेणियों की ओर ज्यादा-से-ज्यादा गौर किया जाना चाहिए। ऊंची श्रेणियां जनता की निगाह में बहुत ज्यादा रहती हैं, मगर नीचे की श्रेणियों का लोगों की जिन्दगी के साथ कहीं ज्यादा काम पड़ता है। मैं नहीं जानता कि यह संस्था या दूसरी संस्थाएं इस पहलू पर, नीची श्रेणियों, जैसेकि साधारण राजस्व कर्मचारी के बारे में कितना सोच-विचार करती हैं। राजस्व-विभाग का साधारण कर्मचारी गांव के औसत निवासी की निगाह में उच्च अफसरों के मुकाबले ज्यादा अहमियतवाला होता है।

आपको शायद एक बूढ़ी औरत का किस्सा याद होगा, जिसके लड़के पर, मेरा खयाल है, उच्च न्यायालय के सामने एक बहुत बड़े अपराध के लिए, शायद हत्या के लिए, मुकद्दमा चला था। जब जज ने अपराधी को बरी कर दिया तो बूढी औरत ने उससे कहा, "बहुत-बहुत धन्यवाद, परमात्मा आपको कोतवाल बना दे।" उसकी नज़र में बड़ी कचहरी के जज के मुकाबले कोतवाल कहीं ज्यादा बड़ा आदमी था। कोतवाल से उसका

रोज काम पड़ता था। इस तरह हमको नीचे के कर्मचारियों के बारे में सोचना होगा, जो प्रशासन की नींव होते हैं।

योजना आयोग, राष्ट्रीय विकास परिषद् और आमतौर पर सरकार ने पंचायतों, सहकारी समितियों आदि पर बहुत जोर दिया है। उसका एक पहलू यह है कि इन संस्थाओं को सरकारी रूप न दिया जाय, इन्हें खुद गांव के लोग चलायें, जो कि उनके सदस्य होते हैं। अफसरों को उनसे दूर रहना चाहिए, सलाहकार के रूप में। वे मदद जरूर दें, किन्तु उनपर हुकूमत न चलायें और उनके काम में दखल न दें, उन्हें गलतियां करने दें। हमें यह मानना चाहिए कि उनकी बेबसी और अधिकारहीनता से उनकी गलतियां अक्सर ज्यादा अच्छी होंगी। उनके सिर पर किसीके बैठ जाने से वे बेबस हो जाते हैं। इस तरह उनका कभी विकास नहीं होगा। यह एक महत्वपूर्ण बात है।[1]

---

१. भारतीय सार्वजनिक प्रशासन संस्था, नई दिल्ली की पांचवीं वार्षिक साधारण सभा में भाषण, २५ अप्रैल १९५९।

: २६ :

कड़ी मेहनत करनी होगी

कड़ी मेहनत से ही तरक्की हो सकेगी। हमें अपनी ही मेहनत से दौलत पैदा करनी होगी और तभी हिन्दुस्तान को एक खुशहाल लोकहितकारी राज्य बनाने और समाजवादी तरीके का समाज बनाने का हमारा नया सपना सच हो सकेगा। समाजवाद की मानी होते हैं एक बड़े हद तक बराबरी और वह कुछ लोगों के सोचने के मुताबिक हमारे पास जो कुछ है उसका समान बंटवारा करके कायम नहीं की जा सकती। समाजवाद की पहली शर्त यह है कि हमारे पास बांटने के लिए कुछ होना चाहिए; दूसरे शब्दों में हमें काफी दौलत पैदा करनी चाहिए। अगर हम जमीन से और उद्योगों से ज्यादा-से-ज्यादा पैदा नहीं करते तो हमारे पास बांटने के लिए अपनी गरीबी के अलावा और कुछ नहीं होगा।

बहुत समय पहले हमने आजादी का सपना देखा था और वह आजादी हमने हासिल कर ली है।

अब हम हिन्दुस्तान के लिए काम करने का सपना देखते हैं, ताकि हमें गरीबी और बेकारी से छुटकारा मिल सके और देश में हरेक की—हर औरत, मर्द और बच्चे की जरूरतें पूर और उसे विकास करने के मौके मिल सकें। हम ऐसे देश का

सपना देखते हैं, जिसमें अमीर और गरीब के बीच बहुत ज्यादा फर्क नहीं होगा, जहां कम या ज्यादा लोग समान होंगे, जहां जात-पांत के फर्क भी ज्यादा नहीं होंगे और लोग धर्म और जाति के बिना किसी लिहाज के एक साथ रहेंगे और देश के समान नागरिक के रूप में एक दूसरे से सहयोग करेंगे। यह काम हमारे हित में है और देश के भी हित में है, ताकि हम शान्ति के लिए और सारी दुनिया में शान्ति कायम रखने के लिए काम कर सकें। यह तभी मुमकिन होगा जब हम तरक्की करेंगे।

हम विदेशों से कुछ सहायता प्राप्त करके गरीबी और बेकारी से छुटकारा नहीं पा सकते। जो देश आज खुशहाल हैं, उन्होंने पैदावार बढ़ाकर खुद दौलत पैदा की है। हमको अपनी जरूरत के लिए खुद ही दौलत पैदा करनी होगी। देश की दौलत को बढ़ाने के लिए हम देश में बड़े कारखाने कायम कर रहे हैं, मशीनें खड़ी कर रहे हैं और बिजलीघर बना रहे हैं। इसके बावजूद जमीन की पैदावार बढ़ाना भी जरूरी है; क्योंकि इस तरह जो बचत होगी, उससे हम छोटे-बड़े उद्योग कायम कर सकेंगे।

यह सरकारी हुक्मनामों, कानूनों या अफसरों से नहीं हो सकेगा, बल्कि खुद लोग ही यह काम कर सकेंगे। इसलिए सात साल पहले सामुदायिक विकास-आन्दोलन शुरू किया गया, ताकि गांवों के लोग अपनी तरक्की खुद कर सकें।

मेरा खयाल है कि सामुदायिक विकास-खण्डों ने आमतौर पर गांववालों के स्तर को ऊंचा उठाने में मदद दी है और लोगों को ज्यादा सक्रिय और सहकारी बनाया है। सामुदायिक विकास-आन्दोलन में सहकारिता के आदर्श को दाखिल किया है, जिसका

यही मूल मंत्र है कि लोग मिलकर काम करें और खुद पैरों पर खड़े हों। हर गांव के लिए पूरे अधिकारोंवाली मजबूत पंचायत और मजबूत सहकारी समिति होनी चाहिए, जो उसके नागरिक और माली कामों की देखभाल कर सके।

सेवा सहकारी समितियों का मकसद यह है कि लोग अपनी चुनी हुई कमेटियों के जरिए मिलकर काम करें। हमने कहा है कि अगले तीन साल हमें सेवा सहकारी समितियों का विस्तार करना चाहिए और लोग जब रजामंद हों तो उन्हें ट्रेनिंग देनी चाहिए। उसके बाद हम मिली-जुली खेती करना चाहेंगे, किन्तु किसानों की रजामंदी से ही ऐसा होगा। इस विषय में कोई जोर-जबर्दस्ती नहीं हो सकती, क्योंकि सहकारिता में मुख्यतः अपनी मर्जी से काम चलता है। सहकारिता और दबाव दो परस्पर-विरोधी शब्द हैं। जब सहकारी खेती शुरू हो, तब भी ज़मीन की मालक़ियत व्यक्तिगत किसान के पास ही रहती है और उस मालकियत को कोई भी छीननेवाला नहीं है।

मुझे कोई शक नहीं है कि ये सहकारी समितियां और किसी जगह की बजाय मद्रास राज्य में ज्यादा तेजी से फैलेंगी और इस तरह मैं उम्मीद करता हूं कि मद्रास राज्य इस नये कार्य-क्रम में तेजी से आगे बढ़ेगा।[1]

१. राजपलयम, मद्रास में दिया गया भाषण, मई १९५९।

: २७ :

विकास-अधिकारियों का योग

मैसूर नगर के इन सम्मेलनों में हाजिर होने की मेरी बहुत चाह थी। इससे पहले मैं विकास-आयुक्तों के सम्मेलनों में हाजिर रहा हूं, जहां विकास-आन्दोलन की समस्याओं पर चर्चा की गई थी। मैंने इन सम्मेलनों को सहायक और सामान्य तरह के सम्मेलनों से कुछ जुदा किस्म का पाया। इन सम्मेलनों में लेक्चरबाजी कम हुई और खास-खास मसलों पर चर्चा ज्यादा।

मैंने यह माना है और अक्सर कहा है कि देश में सामुदायिक विकास-आन्दोलन की भारी अहमियत है। मैंने इसे पूरी सचाई के साथ क्रान्तिकारी आन्दोलन कहा है। मैंने उसकी बहुत-सी कमियां और अनेक तरह की नाकामयाबियों के बावजूद ऐसा कहा है। फिर भी मैं मानता हूं कि मौजूदा हालतों में उसका काम गहराई और आकार की नजर से क्रान्तिकारी है, इस मानी में कि वह हमारे गांवों के तीस करोड़ रहनेवालों की समाज-व्यवस्था को अमन के साथ और धीमे-धीमे बदलने की कोशिश कर रहा है। इसलिए इस आन्दोलन के चलानेवालों के सिर पर भारी जिम्मेदारी है। उनमें से किसीकी हैसियत एक मशीन में पुर्जे की हैसियत नहीं है, बल्कि वह एक महत्वपूर्ण गतिशील

सरकार को एक हद तक प्रशासन की कमजोरियों की वजह से बहुत-सी नाकामयाबियों का मुंह देखना पड़ा है। अगर हम अपने प्रशासन को बुनियादी विषयों और महत्वपूर्ण मुद्दों पर चुस्त बना सकें तो काफी अच्छे नतीजे निकलेंगे। एक यह भी बात है कि हम काम का बहुत ज्यादा फैलाव कर देते हैं। हमें खास सवालों पर गौर करना चाहिए।

शायद सामुदायिक विकास-आन्दोलन में सबसे अहम आदमी विकास खण्ड अधिकारी है। बेशक, विकास-आयुक्त और दूसरे भी महत्वपूर्ण हैं। इसी तरह ग्राम-स्तर पर काम करनेवाला भी महत्वपूर्ण है। किन्तु विकास खण्ड अधिकारी का इस आन्दोलन में सबसे ज्यादा महत्व का स्थान है। इसलिए सामुदायिक विकास की कामयाबी का दारोमदार विकास खण्ड अधिकारियों पर रहेगा। वे धरती के सत्व हैं या उन्हें होना चाहिए। यदि हम उच्च स्तर के काबिल और जोशीले विकास खण्ड अधिकारियों का एक दल सारे देश में खड़ा कर सकेंगे तो हम तेज तरक्की की भूमिका बना लेंगे। विकास खण्ड अधिकारी को, बेशक, काम करनेवाला और जोशीला होना चाहिए। उसमें काम को आगे बढ़ाने का जोश होना चाहिए। अखीर में यही ऐसी चीज है, जो आदमी को काम करने के लायक बनाती है और जिसका स्पर्श दूसरों को भी होता है।

सात वर्ष पहले जब सामुदायिक विकास आन्दोलन की शुरूआत हुई, तबसे मैंने यही माना है। मेरा अब भी वही यकीन है और मुझे यकीन है कि इससे हमारे देश का, खासतौर पर

: २८ :

लोकतंत्री विकेन्द्रीकरण—एक ऐतिहासिक कदम

हम अपने देश में लोकतंत्र या पंचायती राज की नींव रखने जा रहे हैं। अगर महात्मा गांधी आज जिंदा होते तो उन्हें कितनी खुशी हुई होती। इतिहास और भूगोल दोनों ही दृष्टियों से राजस्थान हिन्दुस्तान का दिल है। इस राज्य के गांवों और नगरों के लोगों ने अपने कंधों पर लोकतंत्र की भारी जिम्मेदारियों को उठाने की कसम ली है और इस राज्य की सरकार ने विधान-सभा के एक कानून के जरिये वे जिम्मेदारियां उन्हें सौंप दी हैं। यह एक तवारीखी काम है और महात्मा गांधी को यह जानकर बड़ी खुशी होती कि यह तवारीखी कदम उनकी साल-गिरह पर उठाया गया।

मैं जब हिन्दुस्तान के इतिहास पर गौर करता हूं तो मैं पाता हूं कि हिन्दुस्तान के इस लम्बे और उतार-चढ़ाव से भरे हुए काल में अनेक घटनाएं घटी हैं। बहुत-सी घटनाओं का इतिहास में जिक्र हुआ है तो कुछ घटनाएं लोगों के दिलों में घर कर चुकी हैं। मिसाल के लिए हम देश के कोने-कोने में रामलीला मनाते हैं। दशहरा सारे देश में मनाया जाता है, क्योंकि वह लोगों के दिलों में जम चुका है, इतिहास के पन्नों में ही नहीं। ये सब लिखी और गैर-लिखी घटनाएं हमारे राष्ट्र के

जीवन में घुल-मिल गई हैं। जो उतार-चढ़ाव हमने देखे हैं, जो सुख और दुख हमने अनुभव किये हैं, जो कामयाबियां और नाकामयाबियां हमें मिली हैं, उन सबने हमारे हिन्दुस्तान को बनाया है।

हिन्दुस्तान की कहानी बहुत लम्बी है और मैं नहीं जानता कि आपमें से कितनों ने उसे जानने की कोशिश की है। बचपन से ही हमने अपने बारे में बहुत-कुछ सुना और पढ़ा है कि हमारे देश का नाम हिन्दुस्तान क्यों पड़ा और हम क्यों 'जय हिंद' पुकारते हैं। हम अपने देश को भारत, हिन्दुस्तान और इण्डिया वगैरा अलग-अलग नामों से पुकार सकते हैं और जब हम 'जय हिन्द' का नारा बुलन्द करते हैं तो हमारा मतलब एक ही होता है। क्या मैं आपसे पूछूं कि भारतमाता का क्या मतलब है? पंजाब में एक बार मैंने पंजाब के कुछ हट्टे-कट्टे किसानों से पूछा, जो जोर-जोर से 'जय हिन्द' का नारा बुलन्द कर रहे थे कि भारत माता से वे क्या समझते हैं। काफी सोच-विचार के बाद उन्होंने जवाब दिया कि जिस धरती पर वे खड़े हुए हैं वही भारतमाता है। इसका वे साफ जवाब नहीं दे सके और उन्होंने मुझसे समझाने के लिए कहा। मैंने उन्हें बताया कि आपने लम्बे केशों-वाली किसी देवी की यहां-वहां तस्वीर देखी होगी, वह भारत माता नहीं है। वह तस्वीर तो महज एक निशानी है। भारत माता का मतलब है आप, हम सब जो इस बड़े देश के हिस्से हैं। हममें से हरेक भारतमाता के अंग हैं और सबके-सब चालीस करोड़ हिन्दुस्तानी पूरी भारतमाता हैं। जो हमसे पहले हो चुके हैं और आइंदा वक्त में होनेवाले हैं वे सब भारतमाता के अंग

हैं। मौजूदा समय में हम सबसे मिलकर यह देश बना है और इसलिए जब हम 'जय हिन्द' पुकारते हैं तो उसके बहुत सारे मानी होते हैं।

इसलिए हमारा दिमाग इस बारे में साफ होना चाहिए कि इस देश के लोग, इसकी मौजूदा, गुजरी हुई और आइंदा की पीढ़ियां इस बड़े देश के हिस्से हैं। हम अपने घरों और खेतों में तरह-तरह के काम करते हैं। अगर हम इसपर दूसरी तरह से सोचें तो हम कहेंगे कि हम आज अपने आइंदा वक्त के लिए काम कर रहे हैं और हम भारत माता को नई पोशाक पहनाने की कोशिश कर रहे हैं। भारत माता की पुरानी पोशाक, उसकी गरीबी की वजह से, चिथड़े-चिथड़े हो गई है। अब हम चाहते हैं कि भारत माता नई पोशाक पहने और एक खूबसूरत मकान में रहे। हम चाहते हैं कि हमारे देश की जिंदगी की सब जरूरतें पूरी हों। हम चाहते हैं कि हमारे देशवासियों को पूरी खुराक और रहने की जगह मिले। हम ये चीजें दान की शक्ल में नहीं, बल्कि अपनी ही कोशिशों से हासिल करना चाहते हैं। हम अपने ही उद्योग और कड़ी मेहनत से अपने देश को ऊंचा उठाना चाहते हैं। हमारे सामने एक बड़ा काम है। हम चाहते हैं कि जब हमारे बच्चे बड़े हों तो वे अपनेको नये हिन्दुस्तान में पायें। वह हमारे सपनों का हिन्दुस्तान होगा, जिसमें गरीबी नहीं होगी और न भूख होगी।

जब हम आजाद हुए तो हमने लोकराज कायम किया और हर नागरिक को मत देने का हक दिया। आपने अपने-अपने राज्यों की विधान-सभाओं और लोक सभा के लिए अपने नुमाइंदे चुने। एक

तरह से यह सही दिशा में कदम था, किन्तु अपने नुमाइंदा चुनने के बाद दरअसल लोकतंत्र नहीं आया। अगर बड़े अफसर जब-तब लोगों से सलाह लिया करें तो यह लोकराज नहीं हुआ। हिन्दुस्तान की सच्ची तरक्की तभी होगी जब गांवों के लोगों में राजनैतिक चेतना पैदा होगी। देश की आबादी का अस्सी फी-सदी से ज्यादा भाग गांवों में रहता है और देश की तरक्की का दारोमदार हमारे गांवों की तरक्की पर है। जब कभी हमारे गांव तरक्की करेंगे, तभी हिन्दुस्तान मजबूत राष्ट्र बनेगा और कोई भी उसकी तरक्की को नहीं रोक सकेगा।

सात बरस पहले हमने सामुदायिक परियोजनाओं और राष्ट्रीय विस्तार सेवा-जैसी विकास-योजनाओं की शुरूआत की। ये तीन लाख से ज्यादा गांवों में फैल चुकी हैं और कुल मिलाकर अच्छा काम हुआ है। मगर आपको यह महसूस करना चाहिए कि लाखों गांवों को ऊंचा उठाना कोई मामूली काम नहीं है और हम अपनी उम्मीद के मुताबिक काम नहीं कर पाये हैं। सरकारी मशीनरी पर आसरा करने की वजह से हमारी धीमी तरक्की हुई है। अफसर शायद जरूरी होता होगा, क्योंकि वह अपने मामले का जानकार होता है। किन्तु यह काम तभी हो सकेगा जब लोग जिम्मेदारी खुद अपने हाथों में सम्हालेंगे। कुछ लोगों का खयाल था कि अगर जिम्मेदारी लोगों को सौंपी गई तो वे शायद उसे उठा नहीं पायंगे, किन्तु लोगों को मौका देकर ही उन्हें जिम्मेदारी उठाने की बात सिखाई जा सकती है। इसलिए हिम्मतभरा कदम उठाना जरूरी हो गया, ताकि लोगों को ज्यादा-से-ज्यादा जिम्मेदारी सौंपी जा सके।

उनसे सिर्फ सलाह ही नहीं लेनी थी, बल्कि असर रखनेवाला हक उन्हें सौंपना था। इसलिए हमने फैसला किया कि हर गांव में ज्यादा हकोंवाली एक पंचायत हो और एक सहकारी समिति हो, जिसके हाथों में काफी हक हों।

आपको पंचायतों और सहकारी समितियों के कामों में फर्क करना चाहिए। पंचायत रोजमर्रा के प्रशासन में मदद देती है और सहकारी समिति आर्थिक मामलों का इन्तजाम करती है। सरल भाषा में सहकारी समिति का मतलब यह है कि लोग एक-दूसरे की मदद करें और हम सब जानते हैं कि एके में ही ताकत होती है। प्रशासन की जिम्मेदारी सिर्फ बड़े अफसरों के ही हाथों में नहीं होनी चाहिए, किन्तु वह बराबर-बराबर देश के ४० करोड़ लोगों में बांट दी जानी चाहिए। अगर हम ऐसा कर सके तो हम काफी ताकत हासिल कर लेंगे। हमें लोगों का सहयोग मिलना चाहिए और हमें एक-दूसरे से सलाह लेकर काम करने चाहिए। इसलिए हमने पंचायतों और सहकारी समितियों के काम को मुनासिब अहमियत दी है।

सहकारी समितियां कई तरह की होती हैं और यह जरूरी नहीं है कि सारे देश में एक ही किस्म की सहकारी समितियां हों। सहकारी समिति का काम उसके अपने क्षेत्र की जरूरतों और हालत के मुताबिक होगा। आमतौर पर सहकारी समिति ऐसी संस्था समझी जाती है, जो किसानों को कर्ज देने का काम करती है। यह जरूरी काम है, किन्तु यही काफी नहीं है। हम चाहते हैं कि सहकारी समिति और भी काम करे, जैसे खरीद-बिक्री करना, रासायनिक खाद, बीज और दूसरा खाद बांटना

और खेती की पैदावार को बेचना वगैरा। पहले किसान अपनी खेती की पैदावार बेचने के लिए बिचौलिये के आसरे रहता था और नतीजा यह आता था कि सारा मुनाफा गांव के साहूकार की जेब में चला जाता और किसान को ज्यादा फायदा नहीं होता था। जब कभी किसान को रुपये की जरूरत होती, उसे अपनी पैदावार यानी फसल बहुत कम कीमत पर बेचनी पड़ती। हम इस तरीके को बदलने की कोशिश कर रहे हैं, ताकि किसान को अपनी मेहनत का ज्यादा-से-ज्यादा फायदा मिल सके। अगर खेती की उपज को सहकारी समिति की मार्फत बेचा जाय और बिचौलिये को हटा दिया जाय, तो पूरा-का-पूरा लाभ किसानों को मिलेगा। सहकारी समिति और भी कई तरह की सेवा कर सकती है, जैसे अच्छी किस्म के बीज, अच्छे औजार और जरूरत हो तो छोटे ट्रैक्टर मुहय्या कर सकती है। उसका मकसद ऐसे तमाम काम करना है, जिन्हें व्यक्तिगत किसान कामयाबी के साथ नहीं कर सकता। इस तरह सहकारी समिति किसानों में सहकारी कोशिश को बढ़ावा दे सकती है और उन्हें शोषण से बचा सकती है।

सहकारी समितियां किसान की जमीन नहीं ले लेतीं; जमीन पर उसकी मिलकियत रहती है। वे सिर्फ उसके मुनाफे को बढ़ाने में मदद देती हैं। जो रुपया दूसरों की जेबों में चला जाता था, वह खुद किसानों में बंट जाता है और इस तरह किसान खुशहाल होते हैं। करीब-करीब दुनिया के हर देश में किसानों ने सहकारी समितियां बनाई हैं। वे केवल मुनाफा ही आपस में नहीं बांटते, बल्कि छोटे कारखाने कायम करते हैं, स्कूल खोलते हैं और

नागरिक तथा पशु-अस्पताल चलाते है। इस तरह सभीका फायदा होता है। उनके बच्चों को शिक्षा हासिल करने का मौका मिलता है और हरेक को रोजगार मिलता है। इस तरह सारे देश को लाभ मिलता है।

किन्तु आपको यह याद रखना चाहिए कि कुछ लोगों को एक जगह इकट्ठा कर लेने से ही सहकारी समितियां चलने नहीं लगतीं। लोगों को कामों को सिखाना होता है और जबतक उन्हें काफी शिक्षा नहीं मिल जाती, वे समितियों को कुशलता से नहीं चला सकते। इसलिए हमने लोगों को मुनासिब ट्रेनिंग देने का इन्तजाम किया। ग्राम-कार्यकर्ताओं और विकास खण्ड अधिकारियों को इन कामों की शिक्षा दी गई, ताकि सहकारी समितियों का इन्तजाम सीखे-समझे लोगों को सौंपा जा सके।

सहकारी समितियां दूसरी तरह भी सेवा कर सकती हैं। हमारे जैसे देश में, जहां भूमि छोटे-छोटे टुकड़ों में बंटी हुई है और हर किसान के पास जमीन का छोटा टुकड़ा है, यह कहीं अच्छा होगा कि बीस-तीस किसान मिल जायं और शामलात खेती करें। इससे खर्च में कमी होगी और मुनाफा ज्यादा होगा। इसलिए सामूहिक खेती बहुत फायदे की चीज है, मगर वह कुछ समय बाद ही हो सकेगी। उससे आपकी जमीन की मिलकियत पर किसी तरह का असर नहीं पड़ेगा और आपको अपनी खेती की पैदावार बेचने और दूसरे माली मामलों में मदद मिलेगी। इसलिए मेरा यकीन है कि अगर प्रशासन के मामलों में मदद देने के लिए पंचायत और माली मामलों के लिए सहकारी समिति हो तो हमारे गांवों की बहुत तरक्की हो सकती है।

तीसरी अहम बात यह है कि हमारे गांवों में स्कूल होने चाहिए। आज की दुनिया में अनपढ़ आदमी कोई तरक्की नहीं कर सकता। यह समझना गलत है कि गांवों में रहनेवाले आदमियों को शिक्षा की जरूरत नहीं है। शिक्षा किसान के लिए भी जरूरी है। हर रोज नये-नये मौके आ रहे हैं और यह जरूरी है कि हर गांव में स्कूल हो, ताकि गांववालों को शिक्षा मिल सके। याद रखिये, शिक्षा सिर्फ आदमियों के लिए ही जरूरी नहीं है, बल्कि औरतों को भी बराबरी के मौके मिलने चाहिए, इसलिए कि कोई भी देश तबतक तरक्की नहीं कर सकता जबतक कि मर्द और औरतें मिलकर देश को खुशहाल बनाने की कोशिश नहीं करते। वह जमाना लद गया जब औरतें घरों की चार-दीवारी में बंद रहती थीं और मर्दों के कामों में हाथ बंटाने की उन्हें इजाजत नहीं थी। औरतों को घर का काम करना चाहिए, मगर यही सबकुछ नहीं हो सकता। उनको भी किसी-न-किसी तरह देश की सेवा करनी चाहिए। तभी हमारा देश तरक्की करेगा। इसलिए हमारी देहाती जिन्दगी में पंचायतें, सहकारी समितियां और स्कूल जरूरी हैं।

हम सबको यह याद रखना चाहिए कि दौलत पसीना बहाकर और मेहनत करके ही पैदा की जा सकती है। हमारी दौलत का दारोमदार हमारी मेहनत पर है। शिक्षा, स्वास्थ्य, संचार-साधनों और दूसरी अनेक लोक कल्याणकारी योजनाओं पर जो रुपया खर्च होता है वह लोगों का रुपया है। पहली पांचसाला योजना खत्म हुई, दूसरी चल रही है और एक-डेढ़ साल में खत्म हो जायगी। तीसरी पांचसाला योजना तैयार हो रही है।

गांवों की तरक्की के लिए सामुदायिक विकास खण्डों जैसी विकास योजनाओं की बहुत अहमियत है। अब समय आ गया है जब इन योजनाओं को चलाने की जिम्मेदारी लोगों को सौंप देनी चाहिए। इसलिए मैं चाहूंगा कि आप इन जिम्मेदारियों को पक्के यकीन और हौसले से उठा लें। आप अपनी आमदनी को बढ़ायें और उसे सारे गांव की भलाई और अपने बच्चों की शिक्षा पर खर्च करें। आपको यह जानना चाहिए कि आपने अपने सिर पर भारी जिम्मेदारी ली है और हिन्दुस्तान के लोग आपकी तरफ निगाह लगाये हुए हैं। मुझे पूरा यकीन है कि न सिर्फ राजस्थान में, बल्कि देश के हरेक हिस्से में, जहां लोगों को जिम्मेदारी सौंपी जायगी, अच्छे नतीजे निकलेंगे।

हम यहां बैठे हैं और मैं देखता हूं कि सूरज डूब रहा है और मेरी आंखों के सामने दो तस्वीरें खिंच रही हैं। एक पुराने राजस्थान की तस्वीर, जिसकी निशानी है अमरसिंह राठौड़ का यह किला और दूसरी तस्वीर नये राजस्थान की है, जिसकी प्रतीक है मौजूदा पीढ़ी। पुराना और नया एक दूसरे के साथ कंधे भिड़ा रहे हैं। हम नये ज़माने की उपज हैं, लेकिन हमें आइंदा को बनाना है। हमें पुराने नज़ाम की इज्जत करनी है, लेकिन हमें याद रखना है कि हमें नये हिन्दुस्तान को बनाना है।

खेती आज के हमारे राष्ट्रीय जीवन की नींव है। हमें अनेक परियोजनाएं हाथ में लेनी होंगी, मगर हमारी सभी परियोजनाओं की कामयाबी का दरोमदार खेती पर है। जबतक हम खुराक के मामले में अपने पैरों पर खड़े नहीं होते, हम आगे नहीं बढ़ सकते। अगर हम विदेशों से अनाज मंगायंगे तो हमारा

सारा पैसा खिंचकर बाहर चला जायगा और हम रोज़-ब-रोज़ गरीब होते जायंगे। साथ ही हमें, भारी उद्योग कायम करने और दूसरी परियोजनाओं के लिए रुपये की जरूरत है। इसलिए हमारी पहली जरूरत यह है कि हम अपनी खेती की पैदावार बढ़ायें। इस सिलसिले में ही मैं सहकारी समितियों के लिए ज़ोर देता हूं। राजस्थान की ज़मीन बहुत उपजाऊ है। आपमें से बहुत-से लोग गंगानगर के निकट सूरतगढ़ से आये होंगे। कुछ समय पहले वह बंजर इलाका था, मगर अब उसमें भाखरा से सिंचाई हो रही है और वहां बड़ी शानदार फसल हुई है। ये सब बातें तभी हो सकेंगी जब लोग कड़ी मेहनत करेंगे।

इसलिए मैं दोहराता हूं कि आपने एक शुभ दिन को ऐतिहासिक कदम उठाया है और मैं आपको बधाई और आशीर्वाद देता हूं। लेकिन मैं बधाई और आशीर्वाद देनेवाला कौन हूं? हम सब एक शामलात कोशिश में भागीदार हैं। यह अच्छी बात है कि हम एक-दूसरे को बढ़ावा दें, किन्तु असली खुशी तो तब होगी जब हम कामयाब होंगे। जब हमारी कोशिश का नतीजा आना शुरू होगा, तभी हमें सच्ची खुशी होगी। आप कोई भी काम हाथ में लें और अपनी हिम्मत और कड़ी मेहनत से उसे कामयाब बनायें तो उससे हमें ताकत मिलेगी और सारा राष्ट्र मजबूत होगा। हम अपनी आजादी के लिए लड़े और जब हमने उसे हासिल कर लिया तो हमने अपने भीतर नई ताकत महसूस की। दुनिया हमारी इज्जत करने लगी और हमारी कोशिशों का नतीजा निकला। हमने पहली पांचसाला योजना बनाई और उसे कामयाबी से पूरा किया। उससे हमारा अपने ऊपर यकीन

जमा। आप अपनी पंचायतों को कामयाब बनाने की कोशिश करें। आप सहकारी समितियों को हौसले और ताकत से चलाने की कोशिश करें। आप देखेंगे कि राजस्थान के लोगों की जिंदगी कितनी बदल गई है। ज्यों-ज्यों आपकी हालत में सुधार होगा आपको ज्यादा ताकत मिलेगी और अपने पर आपका यकीन बढ़ेगा। आप फख्र से अपना सिर ऊंचा कर सकेंगे और तेजी से तरक्की करेंगे। मेरी शुभकामनाएं हमेशा आपके साथ होंगी और मुझे यकीन है कि राजस्थान के लोग क़दम-ब-क़दम अपने मक़सद की तरफ आगे बढ़ेंगे।

हम अभी तक कामयाब हुए हैं और एक-एक कदम आगे बढ़े हैं। आपने देखा है कि धीमे-धीमे और लगातार हमारी ताकत बढ़ रही है। अब लोगों को जिम्मेदारी सौंप दी गई है तो वह और भी बढ़ेगी। पहले राजा और उनकी प्रजा दो अलग खेमों में बंटे हुए थे, किन्तु अब शासक और शासितों के बीच का वह फर्क मिटा दिया गया है। पुराने जमाने में जब किसी राजा को गद्दी पर बिठाया जाता था, वह एक रात में ही अक्लमंद नहीं हो जाता था। इसी तरह आपको यह नहीं समझ लेना चाहिए कि सरकारी पद हासिल कर लेने से आप दूसरों से बड़े बन जाते हैं।

कभी-कभी हमारे अफसर अपनेको मालिक समझने लगते हैं। मैं उम्मीद करता हूं कि आपके मुखिया और सरपंच उस तरह का बर्ताव नहीं करेंगे। यह जाहिर है कि कुशलता से काम सकनेवाले आदमी को ही जिम्मेदारी सौंपी जाती है। दूसरी तरह के लोग कुशलता से काम नहीं कर सकेंगे। लेकिन अगर कोई अफसर बहुत गरूर करनेवाला हो जाता है और नौकरशाही

तरीके काम में लेना चाहता है तो वह लोगों का सहयोग नहीं पा सकेगा। इसलिए अच्छा अफसर लोगों के साथ बराबरी की भावना से काम करता है। तभी वह दूसरों को ट्रेनिंग दे सकेगा। आप भी इसी बुनियाद पर चलें और आपस में मिल-जुलकर काम करें। आपकी पंचायतों और विकास खण्ड परियोजना से ताल्लुक रखनेवाले ग्राम सेवकों और विकास खण्ड अधिकारियों जैसे सभी लोगों को अपनेको एक ही परिवार के सदस्य समझना चाहिए। ऊंच और नीच का कोई भेद नहीं होना चाहिए, इसलिए कि शासकों और शासितों के दिन अब लद चुके हैं। हमारे बीच जात-पांत के भेद भी मिटने चाहिए। आज के हिन्दुस्तान में कोई अपनेको किसीसे बड़ा न समझे। राजनैतिक जीवन में हरेक को समान वोट मिला हुआ है, आर्थिक मामलों में हरेक को समान अवसर प्राप्त हैं और हमारी पंचायतों में भी हरेक को, चाहे वह मर्द हो या औरत, ऊंच हो या नीच, समान समझा जाना चाहिए। हम सब एक देश की औलाद हैं। हमारा चाहे जो मजहब हो, हम सबको भाई-भाई की तरह रहना चाहिए। हम अपने मजहब पर चल सकते हैं, किन्तु हमें दूसरे मजहबों की भी इज्जत करनी चाहिए। इस तरह की एका और भाईचारे की भावना के साथ हमें आगे बढ़ना है। हमें अपने काम को पूरा करने का हौसला और अपने-आपमें यकीन होना चाहिए।

आप यह भी याद रखें कि दुनिया हर क़दम पर आपकी ओर देख रही है। अगर आप अपने इरादे को ढीला करते हैं और आपसी झगड़ों और दलबंदी में उलझ जाते हैं तो आप अपने मिशन में कामयाब नहीं होंगे, आपकी जग-हँसाई होगी। जब

हम कोई बड़ा काम हाथ में लेते हैं तो हम भी बड़े बन जाते हैं। हमें छोटे आदमियों जैसा बर्ताव नहीं करना चाहिए। इसलिए यहां आये हुए आप सब लोगों ने, पंचों, सरपंचों, प्रधानों और दूसरे खास-खास आदमियों ने अपने सिर पर भारी जिम्मेदारी ली है। आपको राजस्थान के आम आदमी को जगाना है और यह एक बड़ा कदम होगा। इसलिए आपको सावधान हो जाना चाहिए कि आपके हाथ से कोई ऐसा गलत काम न हो, जिससे आपकी, आपकी पंचायत और आपके राज्य की बदनामी हो। आपको छोटी बातों से ऊपर उठना है और शानदार मिसाल पेश करना है। यदि आप ऐसा करेंगे तो आप शान्ति और ताकत महसूस करेंगे और आप बहुत ज्यादा तरक्की करेंगे। आनेवाली पीढ़ियां फख्र के साथ कह सकेंगी कि आपने राजस्थान में लोकतंत्र की ठोस नींव रखी थी।[1]

---

१. नागौर (राजस्थान) में लोकतंत्री विकेन्द्रीकरण कार्यक्रम के उद्घाटन के अवसर पर उद्घाटन-भाषण, २० अक्तूबर, १९५९

: २६ :

आगे कैसे बढ़ें ?

अगर आप हाल के कुछ बरसों पर नजर डालें तो लाजमी तौर पर आपको कुछ अच्छी और उम्मीद दिलानेवाली और कुछ नाउम्मीदी की बातें दिखाई देंगी। नाउम्मीदी की एक मिसाल यह है कि लोगों ने हमारी उम्मीदों को पूरा नहीं किया।

यह कहना एक सचाई है कि हम बदलाव के दौर से गुजर रहे हैं। हर जमाना बदलाव लानेवाला होता है। मगर कभी-कभी बदलाव की यह चाल ज्यादा तेज होती है। बदलाव की चाल की अनेक वजहें होती हैं। कुछका आप नाप-जोख कर सकते हैं और कुछका कोई हिसाब नहीं लगाया जा सकता। कभी-कभी देश को खास किस्म की खुराक मिलती है, जिससे नई जिंदगी पैदा हो जाती है। उस हालत में हम देखते हैं कि काफी हलचलें शुरू हो जाती हैं।

सामुदायिक आन्दोलन का मुझपर असर हुआ है, इसलिए कि मेरे खयाल से वह सही तरीका है और सही दिशा में जा रहा है। लेकिन मुझे उसकी कुछ बातों पर, जो उसने की हैं या नहीं की हैं, नाराजी भी हुई है। मैं इस बात से नाराज हूं कि उसका बड़े पैमाने पर फैलाव हुआ है, बहुत-सारे दफ्तर खोले गये हैं, बहुत अफसर लगाये गए हैं और जीपों वगैरा

का इंतजाम किया गया है। अफसर अच्छे हैं, हालांकि अफसरी तंत्र शायद ही कभी अच्छा होता है। यह आदमियों का सवाल नहीं है। सवाल है कि हम मसले पर किस नज़रिये से गौर करते हैं। आम आदमी इतिहास या आदमी के विकास पर कई तरह से गौर कर सकते हैं। उसकी जांच करने का शायद सबसे असरदार तरीका यह होगा कि आप देखें कि आदमी किस तरह के औजार काम में लेता था। अमरीका के श्री बेंजामिन फ्रेंकलिन ने कहा है—'मनुष्य औजार बनानेवाला प्राणी है।' आदमी और दूसरे पशुओं में बड़ा फर्क यह है कि आदमी अपने औजार खुद बनाता है। औजार के जरिये दिमाग अपना संदेश हाथों तक पहुंचाता है। अगर आप ऐसा नहीं करते और आप महदूद रहेंगे तो आप महदूद ही रहनेवाले हैं।

इसे दूसरे शब्दों में यों कह सकते हैं कि हिन्दुस्तान में हम विचार के क्षेत्र में, सामाजिक संगठन के तरीकों में और जुदा-जुदा धन्धों को चलाने के बारे में बड़ी हद तक दकियानूसी हैं। कुदरतन, हर वक्त ऐसा नहीं होता, क्योंकि अगर हमारा सामाजिक संगठन बिल्कुल अप्रगतिशील होता तो वह मर चुका होता और मिट जाता। अगर कोई समाज विकास नहीं करता और बदलते हुए हालात के मुताबिक नहीं बदलता तो वह ज्यादा-से-ज्यादा कमजोर होता चला जायगा और जिन्दगी की अपनी पकड़ खो देगा। हमारे सामने बड़ा मसला यह है कि किस तरह हम दकियानूसी सांचे से बाहर निकलकर नये जमाने में दाखिल हों। इस देश के करोड़ों आदमियों में बदलाव की चाह पैदा होनी चाहिए। बुनियादी बात यह है कि हिन्दुस्तान का दिमाग,

हिन्दुस्तान के करोड़ों लोगों का दिमाग पुरानी लीक को छोड़कर बाहर आये। सामुदायिक विकास में काम का यह बुनियादी नज़रिया है। इसी तरह से हमें समाजवादी ढंग के समाज का विचार करना होगा। हिन्दुस्तान के सामने इसके अलावा और कोई रास्ता नहीं है कि वह समाजवादी ढांचे को अपनाये। दूसरा रास्ता यह है कि वह जड़ बने और आखिर में खत्म हो जाय।

आज के साइंस के जमाने का झुकाव केन्द्रीकरण की तरफ है। प्रगतिशील देशों में बड़े उद्योग या खेती लाजमी-तौर पर केन्द्रीकरण की तरफ जाते हैं। कुछ हद तक केन्द्रीकरण के बिना आप तरक्की नहीं कर सकते। मैं पूरी तरह इस हक में हूं कि कुछ क्षेत्रों में केन्द्रीकरण होना चाहिए। हालांकि आपका केन्द्रीकरण के बिना काम नहीं चल सकता, मगर यह भी सच है कि आप विकेन्द्रीकरण को खत्म नहीं कर सकते। आपको दोनों में संतुलन करना होगा। मैं, जहांतक मुमकिन हो, विकेन्द्रीकरण के हक में हूं, इसलिए कि आखिर में हम इन्सानों का और उनकी आत्म-निर्भरता की भावना का विकास चाहते हैं। यह पृष्ठभूमि है जिसकी वजह से मैं सामुदायिक विकास आन्दोलन को शुरू करने के नज़रिये को पसन्द करता हूं।

मैं कहूंगा कि अफसर को धीमे-धीमे अफ़सर की तरह बर्ताव करना भूल जाना चाहिए। वह अफसर रह सकता है, किन्तु उसे अफसरी ढंग से पेश नहीं आना चाहिए। अगर ग्राम-सेवक अपने छोटे क्षेत्र में अपनेको बड़ा अफसर मान लेता है तो मैं कहूंगा कि वह बिल्कुल गलत ढंग से काम कर रहा है। आपको ऐसी जहनियत से लड़ना होगा, जो हर समय हमपर हावी

होती रहती है। यही वजह है कि मेरे खयाल से सामुदायिक विकास आन्दोलन अपना स्वाद, अपनी चमक, और अपना रंग खोने लगा है और अफसरशाही का एक हल्का नमूना बन गया है। अफसर जिस तरह भला करता है, उसी तरह यह आन्दोलन भी कर रहा है।

इसलिए पंचायती राज आया। बेशक, उसका उसूल दिल को खींचनेवाला है। मगर अमल में भी, जैसाकि हम राजस्थान आंध्र, और मद्रास में देखते हैं, जिस तरह वह बुनियादी बदलाव ला रहा है, वह असर पैदा करनेवाला है। अफसर भी बदल रहा है या बदलने की कोशिश कर रहा है। बेशक, गांव के लोग भी बदल रहे हैं। मेरे खयाल से एक माने में यह सबसे ज्यादा क्रान्तिकारी घटना हमारे देश में हो रही है। कोई कह सकता है कि जितनी कामयाबी की हम उम्मीद करते हैं उतनी कामयाबी नहीं मिलेगी। मगर उसके पीछे छिपी हुई ताकतें हैं, जो एक बार आजाद हो गईं तो हिन्दुस्तान की प्रगति पर भारी असर पड़ेगा; देहाती हिन्दुस्तान हर तरह से और औद्योगिक हिन्दुस्तान भी छोटे उद्योगों और सहकारी समितियों वगैरा के क्षेत्र में खूब आगे बढ़ेगा। वह हमारे सामाजिक संगठन को बदलने में मदद देगा। मेरे खयाल से पंचायती राज की भारी अहमियत है। इसके लिए राज्यों में जो मंत्री जिम्मेदार हैं, उन्हें महसूस करना चाहिए कि उनके हाथों में देश का सबसे महत्वपूर्ण विषय है।

समाज पैदावार के तरीकों के मुताबिक बदलता है। हिन्दुस्तान का किसान इसलिए नहीं बदलेगा कि वह रासायनिक

खाद का इस्तेमाल करता है, बल्कि इसलिए बदलेगा कि उसने नये ढग का हल इस्तेमाल करना शुरू किया है। आप उस आदमी से कोई आशा नहीं कर सकते, जो हजार बरस पुराना हल चलाता है। मुझे ताज्जुब होता है कि आजादी मिलने के इतने बरसों के बाद भी इस तरह के लाखों हल हिन्दुस्तान में आज भी काम में लाये जा रहे हैं। नुकसान उठाकर भी मैं उनकी होली जलाना पसन्द करूंगा, ताकि लोग महसूस करें कि पुराने औजारों को खत्म करने का वक्त आ गया है। नया हल कोई बहुत ज्यादा खर्चीला नहीं है। उसपर ५०, ६० या ७० रुपये खर्च आयगा। राज्य सरकार को यह इन्तजार नहीं करना चाहिए कि कोई प्राइवेट पार्टी ये हल बनायगी और उन्हें बाजार में बेचेगी। यह राज्य सरकारों का काम है कि वे हर जिले में ये हल तैयार करायें और लोगों को बेचें या उधार दें और उनकी कीमत फसल के बाद उनसे वसूल कर लें।

जो रुपया हम खर्च कर रहे हैं, वह बहुत बड़ी रकम है। हर कोई यह समझता है कि रुपये से सब मसले हल हो सकते हैं। मगर यह खयाल सही नहीं है। कम साधनोंवाले देश कड़ी मेहनत और कड़े प्रयोग से काफी आगे बढ़ रहे हैं। हमें भी कड़ी मेहनत करनी चाहिए और यह इन्तजार नहीं करना चाहिए कि और कोई आदमी आकर हमारा काम कर देगा। अगर आप करोड़ों आदमियों को गतिशील बनाना चाहते हैं तो आपको कड़ी मेहनत करनी होगी। मसलों के बारे में आपका दिमागी नजरिया भी सही होना चाहिए। पंचायती राज और सामुदायिक विकास आन्दोलन को अनाज की पैदावार के साथ

जोड़ देना चाहिए, इसलिए कि अनाज की पैदावार से दूसरी बातें भी होंगी।

इसलिए खास बात हमें यह चाहिए कि लोगों के विचारों में बदलाव आये। मुझे पक्का यकीन है कि हिन्दुस्तान का औसत किसान व्यावहारिक और कड़ी मेहनत करनेवाला है और देश के बहुत-से पढ़े-लिखे आदमियों के मुकाबले उसके लिए पुरानी लीक से बाहर आना ज्यादा आसान होगा। मगर किसान अपनी पुरानी लीक को यूं ही नहीं छोड़ेगा। अगर वह कोई काम अपनी आंखों से होता हुआ देख लेगा तो वह अपनी पुरानी लीक छोड़ देगा। किसान के मुकाबले बन्द दिमागवाला आदमी ज्यादा दकियानूसी होता है।

जब मैं हिन्दुस्तान पर नज़र घुमाता हूं, तो, चाहे उद्योग का क्षेत्र हो चाहे खेती का, जो तस्वीर सामने आती है वह काफी हौसला बढ़ानेवाली है। कुछ भी हो, मुझे तो हौसला होता है। मुझे यकीन है कि हम तरक्की कर रहे हैं और आइंदा और भी तेजी से करेंगे। इसलिए नहीं कि हिन्दुस्तान बड़ा देश है, बल्कि इसलिए कि हमने और हालात ने ऐसी ताकतों को आजाद करने में मदद पहुंचाई है कि जिन्हें रोका नहीं जा सकता।

सवाल यह है कि आगे बढ़ने की चाल को हम कितना तेज और आसान बना सकते हैं। राज्यों और केन्द्र में जो सत्ता के आसनों पर विराजमान हैं, उनपर दूसरों के मुकाबले ज्यादा बोझ है। मैं चाहूंगा कि आप इस बुनियादी मसले पर इसी नज़रिये से गौर करें, जो आखिर में, हिन्दुस्तान के ३० करोड़ लोगों और उनके विचारों को बदलने और उन्हें मिलकर काम

करने को उकसाने का मसला है। यह हिन्दुस्तान में एक नई समाज-रचना करने, एक नया सामाजिक और आर्थिक ढांचा खड़ा करने का मसला है। आप राज्यों में और केन्द्रों में इसके लिए एक हद तक उत्तरदायी हैं। मेरी कामना है कि आप कामयाब हों।[1]

---

१. राज्यों के सामुदायिक विकास-मंत्रियों के नई दिल्ली में आयोजित सम्मेलन में भाषण; ९ दिसम्बर, १९६०

: ३० :

चायतें और बिजली

आपमें से कुछको याद होगा कि रूसी क्रान्ति के शुरू के दिनों में एक बार लेनिन ने क्या कहा था। उन्होंने कहा था कि साम्यवाद का मतलब है सोवियत पंचायतें और बिजली। मैं इस बात को हिन्दुस्तान के लिए मंजूर करने को तैयार हूं। मैं साम्यवाद की जगह प्रगति कहूंगा। मैं कहूंगा प्रगति का मतलब है पंचायतें और बिजली। लेनिन के कथन को मैंने थोड़ा बदल दिया है। बिजली खास चीज है। बिजली का मतलब होता है बदलाव को बढ़ावा देनेवाली ताकत, जिससे चीजों को, उद्योगों और खेती को नया रूप दिया जा सकता है। पंचायत पंचायत हैं, चाहे छोटी या बड़ी, वह संसद हैं। पंचायत के साथ बिजली का योग हिन्दुस्तान को बदल देगा।[1]

---

१. राष्ट्रपति के भाषण पर लोक सभा की बहस के उत्तर से, २३ फरवरी, १६६१

: ३१ :

पंचायती राज के जरिए प्रगति

कुछ राज्यों में पंचायती राज की स्थापना और दूसरे राज्यों में उसको शुरू करने की कसम क्रान्तिकारी महत्व की घटना है। पंचायत समितियों को विकास-कार्य और सत्ता का सौंपा जाना हमारे देहाती क्षेत्रों की सारी बुनियाद को बदल देगा और लोगों को ज्यादा अपने पैरों पर खड़ा होने और अपनी जिम्मेदारियों के तईं ज्यादा चौकस बनायगा। शुरू में कुछ कठिनाइयां हो सकती हैं, मगर मुझे यकीन है कि सही दिशा में क़दम उठाया गया है और उसके लाभकारी नतीजे निकलेंगे।

मैं चुने हुए प्रधानों, सरपंचों वगैरा को अपनी बधाइयां और शुभकामनाएं भेजता हूं, जिनके सिर पर नई और भारी जिम्मेदारी आई है। वे हमारे गांवों को बनाने और देहाती इलाकों में नई जिन्दगी पैदा करने के बड़े काम में हमारे कर्मठ और जिम्मेदार साझीदार हैं। खेती की तरक्की और सघनता लाजमी तौर पर उनकी पहली जिम्मेदारी होगी, क्योंकि हमारे देहातों की खुशहाली का दारोमदार उसीपर है। मगर और भी बहुत-कुछ करना होगा। उन्हें बहूद्देश्यीय सहकारी

समितियां बनाने में मदद देनी होगी और छोटे ग्रामोद्योगों के विकास को बढ़ावा देना होगा।

देहाती हिन्दुस्तान की शक्ल बदल रही है। वह पुरानी लीक छोड़ रहा है और धीमे-धीमे नये जमाने का रूप ले रहा है। बदलाव की इस रफ्तार को तेज करना होगा। हमें खेती के ज्यादा अच्छे औजार, अच्छे बीज, खाद और रासायनिक काम में लेने होंगे और पैदावार बढ़ाने के नये तरीके सीखने होंगे। इस सबके आलावा मिल-जुलकर काम करने की भावना पैदा करनी होगी और छोटे झगड़ों और दलबंदी की लड़ाइयों को खत्म करना होगा, जो कभी-कभी हमारी गांवों की जिन्दगी में देखने को मिलती है।

हमारे राष्ट्रीय विस्तार सेवा-अफसरों को यह महसूस करना चाहिए कि यह बहुत बड़ा बदलाव है और उनको पूरी तरह उसके हिसाब से अपनेको ढालना होगा और जोश और गांव-वालों की सेवा की भावना से ऐसा करना होगा। इस विकास की एक खास निशानी यह होगी कि सब जगह शिक्षा का फैलाव होगा। हर लड़के और लड़की को स्कूल की शिक्षा देनी होगी और होनहार विद्यार्थियों को ऊंची शिक्षा, तकनीकी या दूसरी तरह की शिक्षा पाने के सभी मौके देने होंगे।

संसद-सदस्यों और राज्य विधान-सभाओं के सदस्यों के लिए यह जरूरी होगा कि वे अपने चुनाव-क्षेत्रों की पंचायत-समितियों से मेल-जोल का ताल्लुक कायम करें और मुखियों से जान-पहचान करें। अपनी तरफ से पंचायत-समितियों को संसद और विधान-सभाओं के सदस्यों की सेवाओं का फायदा उठाना

चाहिए, जो उन्हींके नुमाइंदे हैं। इस तरह हम एक इकट्ठा और मेल-जोलवाला ढांचा खड़ा करेंगे, जो हर तरह की तरक्की की बुनियाद होगा और लोकतंत्री संगठन को अटूट बना देगा।

मैं उम्मीद करता हूं कि संसद-सदस्य संसद के खाली दिनों में अपने चुनाव-हल्कों में यह काम करेंगे।[1]

---

१. पंचायती राज की स्थापना के मौके पर संदेश, २२ अप्रैल, १९६१

: ३२ :

एक शक्तिशाली प्रयोग

पंचायती राज एक शक्तिशाली प्रयोग है। वह भले ही हिन्दुस्तान के हर हिस्से में कामयाब न हो, मगर उसकी कल्पना विशाल है। वह कहीं-कहीं कामयाब हो रहा है और वह देश के बड़े हिस्से में कामयाब होगा। आप यहां-वहां की घटनाओं को चुनकर कह सकते हैं कि वह कामयाब नहीं हुआ। हो सकता है, कुछ पंचों ने गलत काम किये हों, जैसाकि औरों ने भी किया है। मैं सदन से अनुरोध करूंगा कि वह पूरी पृष्ठभूमि पर विचार करे। कितना बड़ा हमारा देश है और कितनी विशाल उसकी आबादी है, जो एक दिशा में आगे बढ़ रही है और मेरे खयाल से वह सही दिशा है। बहुत लोग लड़खड़ाते और गिर पड़ते हैं। बहुत लोग गलतियां करते हैं। बहुत लोग हमारे मकसद के तईं दग़ा भी करते हैं। यह सब हो रहा है, फिर भी हम कुल मिलाकर आगे और सही दिशा में बढ़ रहे हैं।

हमें बड़ी फिक्र है कि हमारी रफ्तार मंद है, इसलिए कि देश के भीतर कुछ बातें ऐसी हो रही हैं, और बहुत-सी बातें दुनिया में हो रही हैं, जिनसे अगर रफ्तार ज्यादा तेज नहीं हुई तो हमारे लिए मुश्किल पैदा हो सकती है। यह एक गहरा मसला है। मेरे खयाल से ऐसे लोगों की तादाद ज्यादा नहीं है,

जो इस समय की हिन्दुस्तान की सारी रफ्तार को चुनौती देते हों। वे उसके कुछ पहलुओं, बहुत-सी नाकामयाबियों की नुक्ताचीनी कर सकते हैं। दरअसल, मैं कहूंगा कि हमें खास फिक्र जुदा-जुदा नीतियों की नहीं करनी है—हमने नीतियां तय कर दी हैं—हमें तो यह देखना है कि उन नीतियों पर अमल कितना होता है, क्योंकि खतरा हमारे इस सोचने में है कि एक बार नीति तय कर दी तो अपने-आप उसपर अमल होगा। ऊंची नीतियां तय करना काफी नहीं है। बेशक, वे जरूरी हैं, किन्तु ज्यादा जरूरी है उनपर अमल करना और यह देखना कि रफ्तार काफी तेज हो।[1]

---

१. राज्य सभा में राष्ट्रपति के भाषण पर बहस के दौरान दिये गए भाषण से, १५ मार्च, १९६२।

: ३३ :

लोकतंत्र का प्रशिक्षण

मैं उस हालत में हूं कि जब पंचायती राज के लिए मेरे मन में पूरा जोश है। मैं महसूस करता हूं कि हिन्दुस्तान की मौजूदा हालत में यह एक बुनियादी और क्रान्तिकारी चीज है, जिसे हमें देश के पांच लाख से ज्यादा गांवों में खड़ी करना है। जब मैं लोकतंत्री, नुमाइंदा जमातों के इस लम्बे-चौड़े जाल के बारे में सोचता हूं, जो गांवों के नीचे के स्तर से शुरू होकर ऊपर की ओर फैल रहा है तो मेरी कल्पना के पंख लग जाते हैं। संसद या राज्यों की विधान-सभाएं ही लोकतंत्र नहीं हैं। वह तो ऐसा तंत्र है, जो हर आदमी को उकसाता है और हरेक को अपनी मुनासिब जगह लेने की ट्रेनिंग देता है और यह ट्रेनिंग भी देता है कि जरूरत पड़ने पर वह देश में कोई भी जगह ले सके। मैंने कहा है और सचमुच कहा है कि पंचायती राज का मक़सद हर आदमी को प्रधान मंत्री बनने की ट्रेनिंग देना है। मैं जानता हूं कि हर आदमी प्रधान मंत्री नहीं बन सकता, मगर मेरा यकीन है कि बहुत लोगों को देश की सेवा करने लिए तैयार किया जा सकता है।

जब हमने पंचायती राज की चर्चा की तो अनेक लोगों को शक था कि हमारे लोग यह बोझ उठा भी सकेंगे। मुझे पता

था कि वे ग़लतियां करेंगे। फिर भी मैं जानता था कि हम इस कठिनाई को पार कर लेंगे और धीमे-धीमे हर मंजिल पर स्वशासन के तरीके को बढ़ा सकेंगे। इस अहम मामले में आधी मंजिल नहीं हो सकती। या तो आप लोगों पर भरोसा कीजिये या मत कीजिये, थोड़ा भरोसा करके आप कहीं भी नहीं पहुंच सकेंगे, इसलिए कि उससे उन्हें असली जिम्मेदारी नहीं मिलेगी और उनका मुनासिब विकास नहीं होगा। उन्हें एक बार हक और ताकत देने के बाद आपको सरकारी दख्लंदाजी के जरिये उसमें कमी नहीं करना चाहिए। उन्हें गलतियां करने दीजिये और उनकी सजा भी भुगतने दीजिये। अफसरों को सिर्फ सलाहकार होना चाहिए, उन्हें मालिक या हाकिम नहीं बनना चाहिए। मेरा खयाल है कि आपने इस सवाल पर अनेक तरह से सोचा है कि संसद-सदस्य और विधान-सभाओं के सदस्य पंचायत-समितियों और जिला-परिषदों के सदस्य हों या न हों। मेरे खयाल से वे सदस्य हों, मगर उन्हें वोट देने का हक हो या नहीं, यह दूसरा सवाल है, क्योंकि यह हो सकता है कि संसद-सदस्य और विधान-सभाओं के सदस्य ज्यादा तजुरबेकार और मशहूर होने की वजह से जिला-परिषदों और पंचायत-समितियों पर हावी हो जायं। मैं इसे टालना चाहता हूं। मैं चाहता हूं कि लोग अपनेको आजाद महसूस करें। मैं ऐसा दिमागी महौल तैयार करना चाहता हूं कि वे अपने-आपको अपने घर का मालिक महसूस करें, वे यह समझें कि उन्हें फैसला करने का हक है और वे गलतियों की सजा भी भुगत सकते हैं। अगर अफसर या संसद-सदस्य बहुत ज्यादा दखल देता है तो जिम्मेदारी उसपर

चली जाती है, फैसला करने की और फैसले के नतीजों की भी।
बेशक, यह जरूरी है कि हमारे अफसर, जो अपने काम के तजुरबेकार हैं, उनको हर तरह की सलाह दें और उनकी मदद करें, मगर हाकिम बनकर नहीं। उनको ऐसा बर्ताव नहीं करना चाहिए जैसा बड़े आदमी अपने मातहतों को सलाह देते वक्त करते हैं; उन्हें सीधे-सादे बेपढ़े-लिखे किसान और पंचों के साथ बराबरी का और मैं तो कहूंगा कि थोड़ा नम्रता का बर्ताव करना चाहिए। मैं महसूस करता हूं और यह जरूरी है कि लोग अपनेको जिम्मेदार समझें और यह सोचें कि खुद उन्हें ही फैसला करना है। उनपर पोशीदा असर डाला जा सकता है, मगर जान-बूझकर उन्हें चलाया नहीं जाना चाहिए। कुछ हद तक यही उसूल संसद-सदस्यों और विधान-सभाओं के सदस्यों के लिए भी है, जो पूरी तरह भाग लें और अपनी सलाह दें, मगर पंचायत समितियों या जिला-परिषदों की जिम्मेदारी की भावना को कम न करें।

सामुदायिक विकास और पंचायती राज की नुक्ताचीनी को सुनने के बाद भी मैंने इस काम की हमेशा तारीफ की है। यह इस तरह का काम है कि जो बढ़ावा देता है। मैं नहीं जानता कि इस काम का देहात के ३० करोड़ या ३५ करोड़ कितने आदमियों पर असर पड़ा है। यह उकसानेवाला काम है कि इतनी बड़ी जनसंख्या को उनके खुद के सहयोग से ऊंचा उठाया जाय और बाहर से कुछ मदद देने के बजाय असली तरीके से अपना बोझ खुद उठाने के लिए उकसाया जाय। पंचायती राज और सहकारी आन्दोलन के जरिये हम उन्हें यह बोझ उठाने के

लिए तैयार करते हैं। इस काम के दौरान में उनका विकास होता रहता है और जो समस्याएं आज हमें परेशान करती हैं, शायद उन्हें भी वे हल करते जाते हैं। मैं उम्मीद करता हूं कि जब आप इस आन्दोलन की दूसरी दशाब्दि में दाखिल हो रहे हैं तो स्फूर्ति और शक्ति से ऐसा करेंगे और जब तीसरी दशाब्दि नजदीक आयगी तो आप सारे हिन्दुस्तान में पूरी तरह और संतोषजनक ढंग पर पंचायती राज की स्थापना कर चुके होंगे।[1]

१. सामुदायिक विकास और पंचायती राज की सालाना कान्फ्रेंस में दिये गए भाषण का अंश, नई दिल्ली, ३ अगस्त, १९६२।

: ३४ :

ग्राम-स्वयं-सेवक दल

हमने कई बरस पहले सामुदायिक विकास-कार्यक्रम शुरू किया। यह योजना अब करीब-करीब हमारे सभी गांवों में फैल चुकी है। उसने देहाती हिन्दुस्तान को जगाया और वहां लोग हरकत करने लगे। इस कार्यक्रम ने काफी फायदा पहुंचाया है। मगर उससे हमारी कमजोरियों का भी पता चला।

इसके बाद पंचायती राज कायम करने का एक और बड़ा कदम उठाया गया, ताकि गांवों के लोग अपने मामलों का बड़ी हद तक खुद ही इन्तजाम कर सकें। पंचायतों को अधिकार और साधन दिये गए, बजाय इसके कि अफसर उनका नियंत्रण करते। पंचायती राज्य अब हिन्दुस्तान के ज्यादातर राज्यों में कायम हो चुका है। बाकी राज्य भी जल्दी ही उसे कायम कर देंगे।

पंचायती राज के साथ-साथ सहकारी आन्दोलन यानी सहकारी समाज बनाने का काम भी शुरू है। इससे हमारी अर्थ-व्यवस्था लोकतन्त्री होगी और देश के करोड़ों लोगों को आर्थिक सहारा मिलेगा। पंचायती राज और सहकारी समाज से गांवों में राजनैतिक लोकतन्त्र ही नहीं, बल्कि आर्थिक लोकतन्त्र भी कायम होगा और लोग आत्म-निर्भर और मजबूत बनेंगे।

पिछले तीन-चार महीनों में हमारे देश को एक बड़ी मुसीबत का सामना करना पड़ा। हमारे पड़ौसी चीन ने हमपर और हमारे देश पर हमला किया। हमारे देश के लोगों ने देहातों और नगरों में सभी जगह बहादुरी से इस चुनौती का सामना किया, इसलिए कि यह हमारी आजादी को ही नहीं, बल्कि हमारे हितों, हमारी संस्कृति और हमारे लोकतन्त्री जीवन के आदर्शों को भी चुनौती है। हमें एक बड़ा संघर्ष करना है। हमारी सीमाओं पर लड़ाई जारी रहती है या नहीं, यह संघर्ष जारी रहेगा। हममें से हरेक को इस संघर्ष में भरसक मदद देनी होगी।

हमारी पांचसाला योजना का मकसद हमारे देश और उसके लोगों का विकास करना है। अब उसे ऐसी शक्ल देनी है कि उससे देश की हिफाजत करने में मदद मिले। लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि हम अपनी विकास-योजनाओं में कटौती कर देंगे। अगर हम ऐसा करेंगे तो हम कमजोर होंगे और लोगों के लिए यह अच्छा नहीं होगा। इसलिए हमको रक्षा और विकास का यह दोहरा बोझ उठाना होगा। मुझे यकीन है कि हम यह कर सकेंगे और इस संघर्ष में जीत हमारी होगी।

इन हालात में हमारे गांवों और विशाल देहाती जनता को क्या करना चाहिए? देहाती हिन्दुस्तान हमारे राष्ट्र को, जिसमें हमारी सेना और दूसरे रक्षादल भी शामिल हैं, खिलाता है। वह हमारे राष्ट्र को ताकत देता है। इसलिए देहाती हिन्दुस्तान को इस बड़ी कोशिश के लिए संगठित होना चाहिए।

अब हमने हर गांव में एक ग्राम-स्वयं-सेवक दल बनाने का फैसला किया है, जो इस बड़े काम में जुट जायगा। हिन्दुस्तान के साढ़े पांच लाख गांवों के हर बालिग आदमी को गांव और राष्ट्र की सेवा करने के लिए स्वयंसेवक बन जाना चाहिए।

स्वयंसेवक दल के गांवों में तीन काम होंगे—पैदावार बढ़ाना, शिक्षा और रक्षा।

रक्षा-मोर्चे पर हमारे बहादुर सैनिकों का ही काम नहीं है, उसके लिए हमको अपनी पैदावार भी काफी बढ़ानी होगी। इसके लिए खेती में नये तरीके अपनाने होंगे जिससे हमारी पैदावार बढ़ेगी। हमको सिंचाई के छोटे साधन खड़े करने होंगे, खेतों की नालियां बनानी होंगी, भू-रक्षण करना होगा और बिना सिंचाई की यानी बारानी खेती करनी होगी। इससे गांव में सामुदायिक साधनों का निर्माण होगा और उससे गांववालों का रहन-सहन ऊंचा होगा और विकास के लिए पंचायतों को मुस्तकिल आमदनी मिल सकेगी। हमें सिर्फ अनाज ही नहीं, बल्कि शाक, सब्जी और फल भी पैदा करने चाहिए।

शिक्षा बहुत जरूरी है। ग्राम-स्वयं-सेवक दल दूसरों को शिक्षित बनाने में मदद देगा और हमारे महान संघर्ष के बारे में सही जानकारी और समझ देने की कोशिश करेगा। इसके लिए रेडियो और दूसरे तरीके काम में लिये जायंगे। यह जरूरी है कि देश में और खासतौर पर आजादी और आर्थिक विकास के संघर्ष में क्या हो रहा है, इसकी सब लोगों को पूरी जानकारी हो।

गांव का स्वयंसेवक दल गांव की रक्षा की भी देखभाल करेगा। वह सड़कों, रेलों, डाकखानों और तार की लाइनों की निगरानी करेगा और गांव में कानून और व्यवस्था बनाये रखने में मदद देगा।

मेहनत से रुपया पैदा होता है। ट्रेनिंग पाये हुए मजदूर ज्यादा साधन बनाते हैं। हर गांव की एक विकास-योजना होनी चाहिए, जो हर परिवार की जिंदगी की जरूरतें पूरी करेगी। हम सारे देश में रक्षा श्रम बैंक कायम करना चाहते हैं। अगर हर आदमी साल में बारह दिन का श्रम इस बैंक को दे तो इससे गांव को और देश को बड़ा फायदा पहुंचेगा। इस तरह अगर देहातों में २० करोड़ बालिग आदमी ऐसा करने लगें तो वे अपने लिए साल में ३०० करोड़ रुपये की दौलत पैदा कर लेंगे।

हर गांव में लोगों को जरूरतमंद आदमियों की मदद करनी चाहिए। बच्चों की और बेकार या जिस्मानी तौर पर नाकाबिल लोगों की खास तौर पर देखभाल की जानी चाहिए। हर गांव को इस बात में फख्र महसूस करना चाहिए कि उसमें हर आदमी की मुनासिब देख-भाल होती है। हमें गांव को एक बड़ा परिवार समझना चाहिए, जिसमें हर आदमी दूसरों की मदद करता है। इस तरह सारे देश को एक बड़ा परिवार समझा जा सकता है। देश में रहनेवाले सब मजहबों के लोग उसके सदस्य हैं।

इस तरह हम सुखी और खुशहाल गांव बनायंगे और हमारे हर देशवासी की देखभाल होगी और वह गांव की और देश की दौलत को बढ़ायगा। हमें अपनी आजादी की और लोकराज की

हिफाजत करनी है, और इसे एक बड़ा सहकारी प्रयास बनाना है।

आप आज के दिन गांव-गांव में किसी हमलावर या आक्रमणकारी से अपनी आजादी की रक्षा करने और लोगों की भलाई के लिए काम करने की प्रतिज्ञा लेंगे। इस तरह हम अपने प्यारे देश और अपने गांवों और सब देशवासियों की सेवा करेंगे और हिन्दुस्तान को उसकी सब सन्तानों के लिए स्वर्ग-भूमि बनायंगे। इसलिए हम यह शपथ लें, पूरी तरह उसके मतलब को समझकर और उसका पालन करें। तभी हम भारत माता के सपूत कहला सकेंगे।[1]

१. ग्राम स्वयं-सेवक-दल का उद्घाटन करते हुए आकाशवाणी से भाषण : २६ जनवरी, १९६३

"मैंने अक्सर कहा है और मैं यह फिर दोहराता हूं कि पांचसाला योजना पर अमल करने में गांव के लोगों में साझेदारी की भावना पैदा करने का हमारी नजरिया होना चाहिए। हिन्दुस्तान की पांचसाला योजना जनता की योजना है और उस-पर अमल करते समय लोगों में यह भावना पैदा करनी चाहिए कि देश का हर मर्द, औरत और बच्चा मानो 'भारत लिमिटेड' में हिस्सेदार बन जाय और यह समझे कि वह नये हिंदुस्तान को बनाने के बड़े काम में सबके साथ जुटा हुआ है।

"नये हिन्दुस्तान के अफसर की बुनियादी कसौटी यह होगी कि वह कितना जन-सहयोग हासिल कर सकता है। अगर कोई इन्चार्ज या अफसर यह नहीं कर सकता, तो वह चाहे जितना होशियार क्यों न हो, इस काम के लिए कतई लायक नहीं है।"

—जवाहरलाल नेहरू